



पढ़ना सिखाने की शुरुआत

और पढ़ने से संबंधित अन्य लेखों का संकलन



रीडिंग डेवलपमेंट सैल

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

पढ़ने की संस्कृति के विकास के क्रम में वैयक्तिक पठन को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है, और शिक्षकों को इस संस्कृति का हिस्सा बनकर स्वयं उदाहरण पेश करना चाहिए। इसके लिए स्कूल और सामुदायिक स्तर पर पुस्तकालयों को बढ़ावा देने की ज़रूरत है। यह मान्यता कि कथा-उपन्यास पढ़ना समय नष्ट करना है, पठन को हतोत्साहित करने का बड़ा कारण है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005



पढ़ना सिखाने की शुरुआत

और पढ़ने से संबंधित अन्य लेख

संकलन एवं संपादन

लता पाण्डे

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण

नवंबर 2008 अग्रहायण 1930

पुनर्मुद्रण

नवंबर 2011 कार्तिक 1933

अक्तूबर 2015 आश्विन 1937

मार्च 2018 फाल्गुन 1939

जुलाई 2021 आषाढ़ 1943

PD ?T RPS

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्, 2008

₹ 55.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.
एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक
अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्,
श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016
द्वारा प्रकाशित तथा

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्ण अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्ण अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। खड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस	
श्री अरविंद मार्ग	
नयी दिल्ली 110 016	फोन : 011-26562708
108, 100 फीट रोड	
हेली एक्सटेंशन, होस्टेकेरे	
बनाशंकरी III स्टेज	
बेंगलुरु 560 085	फोन : 080-26725740
नवजीवन ट्रस्ट भवन	
डाकघर नवजीवन	
अहमदाबाद 380 014	फोन : 079-27541446
सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस	
निकटः धनकल बस स्टॉप पनिहटी	
कोलकाता 700 114	फोन : 033-25530454
सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लेक्स	
मालीगांव	
गुवाहाटी 781021	फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग : अनुप कुमार राजपूत

मुख्य संपादक : श्वेता उप्पल

मुख्य उत्पादन अधिकारी : अरुण चितकारा

मुख्य व्यापार प्रबंधक : विपिन दिवान

उत्पादन सहायक :

आवरण

निधि बाधवा

आमुख

पढ़ने की क्षमता इस अर्थ में शिक्षा की बुनियाद है कि इसके बगैर किसी भी विषय की पढ़ाई की कल्पना नहीं की जा सकती। लेकिन स्कूली शिक्षा के दायरे से बाहर, सामान्य जीवन और संस्कृति के संदर्भ में भी पढ़ने की क्षमता का एक विशेष महत्त्व है। आधुनिक समाज व्यवस्था में यह क्षमता इतनी ज़रूरी है कि हम इसे हर व्यक्ति के अस्तित्व से जोड़कर देखें तो कोई अतिरंजना नहीं होगी। जो व्यक्ति पढ़ नहीं सकता उसके लिये आज के जीवन के अनेक दरवाज़े बन्द रह जाते हैं और दरवाज़े के अलावा ऐसी खिड़कियाँ भी नहीं खुल पातीं जिनके ज़रिये वह अपने समय की दुनिया का ज्ञान पा सकता। भारत के संदर्भ में आधुनिकता का एक अन्य पहलू लोकतंत्र है जिसकी बुनियाद में भी पढ़ने की क्षमता दिखलाई देती है। यदि लोकतंत्र का एक अर्थ समाज चलाने में हर व्यक्ति की सक्रिय भागीदारी है, तो इस अर्थ को सामान्य नागरिक तभी पूरी ताकत से निभा सकता है जब वह पढ़ना जानता हो। समाज के सांस्कृतिक परिवेश में भी पढ़ने की एक विशेष भूमिका है, क्योंकि अनुभवों और जानकारीयों का संचार उसी हद तक सम्भव है जिस तक यह अपेक्षा की जा सकती हो कि हर व्यक्ति पढ़ सकता है।

यद्यपि पढ़ना किसी भी आयु में सीखा जा सकता है किन्तु बचपन में ही इसे सीख लेना और पढ़ने के कौशल में दक्षता प्राप्त कर लेना जीवन की अन्य चुनौतियों को न केवल आसान बना देता है, बल्कि उनमें एक विशेष प्रकार का उत्साह और आनन्द भी भर देता है। कारण यह है कि दुनिया में अर्थ तलाशने की चाह बच्चे इतनी तीव्रता से महसूस करते हैं कि वे जो भी सुनते, देखते और पढ़ते हैं, उसमें अपने महत्त्व का कुछ-न-कुछ अवश्य ढूँढ़ते हैं। बाल-मनोविज्ञान के इस सत्य के आलोक में देखें तो हमें लगेगा कि प्रारंभिक शिक्षा की व्यवस्था में इस समय एक बड़ी चुनौती पढ़ना सीखने की विधियों में सुधार लाने की है। पारम्परिक विधियाँ वर्णमाला के अक्षरों और उनकी ध्वनियों पर सबसे पहले ध्यान

देती हैं और इस दौरान, बच्चों में स्वाभाविक रूप से पाये जाने वाली अर्थ की चाह की अनदेखी करती हैं। अक्षर ज्ञान होने के पश्चात् इस ओर ध्यान दिया जाता है, लेकिन तब तक बहुत से बच्चों का धैर्य समाप्त हो चुकता है। पढ़ने से मिलने वाले आनन्द और आत्मविश्वास के अभाव में वे दूसरी कक्षा तक आते-आते स्कूल के पाठ्यक्रम की दृष्टि से इतना पिछड़ जाते हैं कि वे स्वयं को असफल महसूस करने लगते हैं। यदि उनके माता-पिता स्वयं शिक्षित नहीं हैं तो उनका धैर्य और भी जल्दी चुक जाता है। नतीजा यह होता है कि बच्चे स्कूल आना छोड़ देते हैं। हमारे देश में यह दुर्घटना आज भी काफी बड़े पैमाने पर घट रही है। इस स्थिति का एक उपचार पढ़ना सिखाने की विधियों में, आरंभ से ही अर्थ की खोज का समावेश करना है।

यह पुस्तक इस दर्शन को विस्तार से समझाने के लिए राष्ट्रीय परिषद् के रीडिंग डेवलपमेंट सैल ने विकसित की है। हमें आशा है कि इसमें शामिल लेखों को पढ़कर छोटे बच्चों के शिक्षकों और उनके माता-पिता पढ़ने के महत्त्व से परिचित हो सकेंगे। पुस्तक में पढ़ने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने वाली गतिविधियों की चर्चा की गई है और राष्ट्रीय परिषद् द्वारा हाल में प्रकाशित 'बरखा' नामक क्रमिक पुस्तकमाला का परिचय भी दिया गया है। इस पुस्तकमाला का उद्देश्य कक्षा एक और दो के बच्चों को ऐसी साहित्यिक सामग्री भरपूर मात्रा में उपलब्ध करवाना है जो उनके सामान्य जीवन में अनुभवों का कल्पनाशील ढंग से निरूपण करती हो। राष्ट्रीय परिषद् की यह समूची परियोजना सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत विकसित हुई है, जिसका लक्ष्य भारत के हर बच्चे को संविधान द्वारा दिए गए शिक्षा के मौलिक अधिकार को सामाजिक यथार्थ में तब्दील करना है।

कृष्ण कुमार

निदेशक

नयी दिल्ली

24 नवंबर 2008

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान

और प्रशिक्षण परिषद्

कुछ ज़रूरी बातें

अभिभावक बड़ी ही उम्मीदों के साथ बच्चों को स्कूल भेजते हैं। बच्चे भी बड़े उत्साह के साथ पढ़ने की दहलीज़ पर कदम रखते हैं। लेकिन पहली कक्षा के अंत तक आते-आते पढ़ना सीखने की आशा मन में लिए कई नन्हे कदम डगमगाने लगते हैं। स्कूल में साल भर पढ़ना सिखाया जाता है, फिर भी बच्चे पढ़ना नहीं सीख पाते। इसके अनेक कारण हैं।

पढ़ना सीखना बच्चे के लिए आनंददायी बनता है या एक दुरूह प्रक्रिया, यह इस बात पर निर्भर करता है कि पढ़ना सीखने के शुरुआती दौर में वह कैसे अनुभवों से गुजरता है। अगर बच्चे को पढ़ना सिखाने की शुरुआत सार्थक संदर्भों से की जाए तो पढ़ना बच्चे के लिए सुखद बन जाता है और उसमें आगे और पढ़ने की तीव्र इच्छा पनपने लगती है। बच्चे को पढ़ना सिखाने की शुरुआत कैसे की जाए? संकलन की प्रथम प्रस्तुति **पढ़ना सिखाने की शुरुआत** इसी जानकारी पर आधारित है।

पढ़ना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है जो पाठक को छपी सामग्री से कहीं आगे ले जाती है। फ्रेंक स्मिथ ने जो कि एक प्रसिद्ध मनोभाषाविद् हैं, पढ़ने की समझ को अपनी बहुचर्चित पुस्तक **अंडरस्टैंडिंग रीडिंग** में रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। **पढ़ना यानी एक सृजनात्मक और संरचनात्मक अनुभव** लेख में फ्रेंक स्मिथ के पढ़ने से संबंधित विचार दिए गए हैं।

पढ़ने का कौशल आत्मीयता का याचक है। शिक्षक की स्वयं की पढ़ने की समझ, उसका स्नेहिल व्यवहार, बच्चे पर किया गया विश्वास पढ़ने का वातावरण सहज ही निर्मित कर लेते हैं। शिक्षक स्वयं पढ़ाने के बदले धीरे-धीरे विकसित होने वाले इस पढ़ने के कौशल का किस प्रकार उद्दीपक बने? बच्चे की पढ़ना सीखने की नैसर्गिक इच्छा का किस प्रकार माध्यम बने? इन्हीं सवालों का जवाब दे रहा है लेख **पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका**।

पढ़ना बच्चे की प्रगति के लिए एक आधारभूत कौशल और माध्यम है। यही कारण है कि कई देशों में पढ़ने के लिए आरंभिक कक्षाओं में अलग से समय दिया जाता है। **पढ़ने के लिए समय** के अंतर्गत बच्चों की शिक्षा में पढ़ने, पढ़ने के स्थान और पढ़ने की स्थिति को लेकर की गई बातचीत दी गई है।

विद्यालय में पहले ही दिन बच्चे को कुछ सार्थक पढ़ने को मिले तो उसकी खुशी की सीमा नहीं रहती। पहले ही दिन पढ़ लेने की, कुछ अर्थ ढूँढ़ लेने की

सफलता उसे सुखद एहसास कराती है कि मैंने खुद कुछ पढ़ा। यह सार्थकता पढ़ने की दिशा में बच्चे के नन्हे कदम आगे बढ़ाती है। इसलिए शिक्षकों को ऐसे रुचिपूर्ण संदर्भों की रचना कक्षा में करनी ही होगी। कैसे? इस सवाल का जवाब दे रहा है एक शिक्षक का अनुभव आधारित लेख **पढ़ाई पहली कक्षा की।**

पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया का ही महत्वपूर्ण अंग है पढ़ने का आकलन। आकलन किस प्रकार किया जाए? कब किया जाए? पढ़ने के आकलन के दौरान किन बातों का ध्यान रखा जाए? इन्हीं सब मुद्दों की चर्चा कर रहा है लेख **पढ़ने का आकलन कैसे करें?**

पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों के लिए एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा क्रमिक पुस्तकमाला विकसित की गई है—**बरखा।** इस पुस्तकमाला की चालीस कहानियाँ पाँच कथावस्तुओं में विस्तारित हैं। बच्चों के रोज़मर्रा के जीवन और परिवेश से जुड़ी यह कहानियाँ बच्चों को स्वयं समझ के साथ पढ़ने के अवसर देंगी। इन कहानियों को पढ़ने से बच्चों में अधिक से अधिक पढ़ने की ललक जगेगी। कक्षा में **बरखा** का इस्तेमाल कैसे करें, किन बातों को ध्यान में रखें? जानने के लिए पढ़िए लेख क्रमिक पुस्तकमाला—**बरखा।**

भारत में कहानी सुनाने की लंबी परंपरा रही है। लेकिन औद्योगीकरण के कारण आए सामाजिक संरचना में बदलाव के कारण कहानी कहीं गायब होती जा रही है। कहानी के शैक्षिक महत्त्व को सभी शिक्षाविद् स्वीकारते हैं। इसलिए सभी देशों में कहानी कला को पुनः प्रोत्साहन दिए जाने पर बल दिया जा रहा है। अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर इस दिशा में क्या प्रयास किए जा रहे हैं, वह कितने सार्थक हैं? पढ़िए **कहानी कहाँ खो गई** लेख में।

कहानी बच्चों को आनंदित करती है। कहानी सुनने के और भी कई लाभ हैं। कहानी से बच्चे सब्र से सुनना, अनुमान लगाना, पात्रों तथा घटनाक्रम को याद रखना तो सीखते ही हैं इससे उनकी एकाग्रता और स्मरणशक्ति का भी प्रशिक्षण होता है। **कहानी सुनाने के बाद** लेख में कहानी की अन्य शैक्षणिक उपयोगिताओं की चर्चा है।

एक बार बच्चे का किताबों की दुनिया से परिचय हो जाए, तो वह उसी में रच-बस जाना चाहता है। किताबों को बच्चों तक ले जाने और बच्चों को किताबों तक ले जाने के उद्देश्य से रीडिंग डेवलपमेंट सैल, एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा बाल पुस्तक मेले का आयोजन प्राथमिक विद्यालय, पैठा, गोवर्धन में किया गया। जिसमें बच्चों को किताबों के अनोखे संसार में जाने का अनूठा अवसर मिला। **हर बच्चे को मिली किताब** में इस बालपुस्तक मेले की रपट प्रस्तुत है।

आशा है, यह संकलन बच्चों को पढ़ना सिखाने से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर एक समझ विकसित करेगा। और तब पढ़ना नहीं सीख पाने की हताशा के कारण कोई भी बच्चा स्कूल नहीं छोड़ेगा।

विषय-सूची

आमुख	iii
कुछ ज़रूरी बातें	v
1. पढ़ना सिखाने की शुरुआत	1
2. पढ़ना यानी एक सृजनात्मक और संरचनात्मक अनुभव	5
3. पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका	9
4. पढ़ने के लिए समय	15
5. पढ़ाई पहली कक्षा की	22
6. पढ़ने का आकलन कैसे करें	27
7. क्रमिक पुस्तकमाला-बरखा	37
8. कहानी कहाँ खो गई	44
9. कहानी सुनाने के बाद	47
10. हर बच्चे को मिली किताब	59

कोई लाके मुझे दे

एक छुट्टी वाला दिन
एक अच्छी-सी किताब
एक मीठा-सा सवाल
एक नन्हा-सा जवाब
कोई लाके मुझे दे!

– दामोदर अग्रवाल

पढ़ना सिखाने की शुरुआत

पहली कक्षा के शिक्षकों में यह मान्यता बैठी हुई है कि पढ़ना सिखाने की शुरुआत वर्ण-परिचय से होनी चाहिए। इस मान्यता के चलते वे पहली कक्षा की पाठ्यपुस्तक *रिमझिम** में शुरुआत से ही मात्रा वाले शब्द देखकर परेशान हो जाते हैं। वे पूछते हैं कि जब बच्चा अक्षरों को ही नहीं पहचानता तो मात्रा वाले शब्दों से कैसे जूड़ेगा।

जाहिर है, पढ़ने को लेकर व्याप्त पारंपरिक मान्यता और उस पर आधारित शिक्षण-विधि *रिमझिम* का आधार नहीं है। *रिमझिम* की सोच यह है कि पढ़ना सिखाने का उद्देश्य बच्चों को एक जिज्ञासु और नियमित पाठक बनाना है। वर्ण-परिचय से शुरू होने वाली शिक्षण-पद्धति ज्यादातर बच्चों को साक्षर तो बना देती है, परंतु उत्साही पाठक नहीं बना पाती। ऐसा क्यों? शायद इसलिए क्योंकि पारंपरिक पद्धति में अक्षर-ज्ञान किसी सार्थक या रुचिकर संदर्भ में नहीं दिया जाता। हर अक्षर की आकृति और ध्वनि को बच्चे की स्मृति में बिठाने के लिए पारंपरिक ढंग से पढ़ाने वाले शिक्षक को काफी समय और श्रम लगाना पड़ता है। वर्णमाला और बारहखड़ी को पूरा करते-करते महीनों बीत जाते हैं। इन महीनों में बच्चे जिस तरह की कवायद से गुजर रहे होते हैं, वह उन्हें थका देती है। अंततः वे साक्षर तो हो जाते हैं, पर अपने स्कूली जीवन को किसी सार्थक आनंद से जोड़ सकने की सामर्थ्य खो बैठते हैं।

हम इस हथ्र से बच्चों को बचा सकते हैं, बशर्ते कि हम उन्हें पढ़ना सिखाने की शुरुआत सार्थक शब्दों और रुचिकर संदर्भों से करें। वैज्ञानिक शोध से पता लगा है कि पढ़ना सीखने की प्रक्रिया की स्वाभाविक शुरुआत बच्चे स्मृति-चिह्न बनाकर करते हैं। यदि आप एक बच्चे को चूहे का चित्र और चित्र के नीचे लिखा शब्द 'चूहा' दिखाएँ तो दो-चार बार ऐसा करने के बाद बच्चा एक कोरे कागज़ पर अलग से, यानी किसी चित्र के बिना, लिखा गया 'चूहा' शब्द पहचान लेगा भले ही वह 'च' और 'ह' जैसे अक्षर तथा इनमें लगी मात्राएँ न पहचानता हो। यह एक चमत्कार नहीं, बच्चे की स्वाभाविक क्षमता है जिसकी बुनियाद पर

*यह लेख एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित शिक्षक संदर्शिका *कैसे पढ़ाएँ रिमझिम* से लिया गया है। हिंदी की प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* शृंखला एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित है।

पढ़ना सिखाने की वैकल्पिक शिक्षण-पद्धति का विकास हुआ है। इस पद्धति में जोर बच्चे की स्वाभाविक रुचि के संदर्भ वाक्यों या शब्दों पर होता है। एक बार जब बच्चे साथ में दिए गए चित्रों या शिक्षक के साथ बातचीत के सहारे कई शब्द पहचानने लगते हैं, तब उन शब्दों में आए अक्षरों की ओर उनका ध्यान दिलाया जाता है। इन शब्दों में मात्राओं की उपस्थिति कोई बाधा नहीं मानी जाती। मात्राओं को भी बच्चे की जिज्ञासु नज़र स्वयं पहचानने लगती है। इस पद्धति में शिक्षक की स्नेही भूमिका बहुत महत्व रखती है।

शिक्षक पढ़ना सिखाने के लिए तरह-तरह के तरीके इस्तेमाल करते हैं; जैसे-फ्लैश कार्ड, चार्ट, लकड़ी के अक्षरों जैसी प्रचलित सामग्री का उपयोग। बेहतर तो यही है कि पढ़ने की शुरुआत **पुस्तकों** से की जाए। बच्चों में पढ़ना सीखने की तीव्र एवं स्थायी ललक पुस्तकें ही उत्पन्न कर सकती हैं।

पढ़ना एक एकाकी प्रक्रिया नहीं है, उसमें कई प्रक्रियाएँ शामिल हैं। पढ़ते वक्त भाषा के उपयोग से जुड़े तीन तरह के संकेत सामने आते हैं-

- अक्षरों की आकृतियाँ और उनसे जुड़ी ध्वनियाँ
- वाक्य विन्यास
- शब्दों के अर्थ

पढ़ने की कुंजी अनुमान लगाने का कौशल है। इस कौशल के विन्यास में कहानी और कविताएँ आश्चर्यजनक योगदान करती हैं। नियमित रूप से इन्हें सुनने से बच्चे भाषा की बुनियादी संरचनाएँ ग्रहण कर लेते हैं।

रिमझिम में बच्चों के लिए रोचक कहानियाँ और कविताएँ दी गई हैं। बच्चों को चारों ओर गोल घेरे में बैठाएँ और पुस्तक बीच में रखकर इन्हें सुनाएँ।

कहानियों को स्वर में उतार-चढ़ाव एवं हाव-भाव के साथ बच्चों को सुनाएँ ताकि वे कहानी में खो जाएँ। हमारे देश में कहानियों की गौरवशाली परंपरा रही है। पुस्तक में दी गई कहानियों के अतिरिक्त पारंपरिक कहानियाँ; जैसे-पंचतंत्र, जातक कथाएँ, विक्रमादित्य की कहानियाँ आदि और अलग-अलग देशों एवं क्षेत्रों की लोककथाएँ भी बच्चों को सुनाएँ। कहानी सुनते समय बच्चे अनुमान लगाते हैं कि आगे क्या होगा। अनुमान का सही सिद्ध होना बच्चे को आनंदित तो करता ही है, उनका विश्वास भी बढ़ाता है। यही **विश्वास** पढ़ने की क्षमता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कहानी सुनते समय नन्हे बच्चे जो अभी साक्षर

नहीं बने हैं, अपनी वास्तविक दुनिया से कहीं बड़ी काल्पनिक दुनिया बनाते हैं। इसलिए बच्चों को प्रतिदिन कहानियाँ सुनाएँ। पहले से सुनी कविता-कहानी बच्चे अनुमान लगाते-लगाते पढ़ना सीख जाते हैं। वे जल्दी पढ़ भी लेते हैं। अक्षर, शब्द एवं वाक्य की पहचान सहज हो जाती है। वास्तव में पढ़ना सीखने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि बच्चे वही पढ़ें जो उनके लिए सार्थक हो। कहानी बच्चे के लिए एक सार्थक दुनिया रचती है।

भाषा सीखने के साधन के रूप में कविता विशेष रूप से उपयोगी होती है क्योंकि कविता को याद रखना आसान होता है। इसे याद रखने के लिए बच्चों को विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता है। बार-बार सुनने, मजा लेने और दोहराने से कविता अपने आप याद हो जाती है। कविताओं को गाकर सुनाएँ और बच्चे साथ में गाएँ बाद में जब वे उसे पुस्तक से पढ़ेंगे तो शब्दों का सरलता से अनुमान लगा लेंगे। पुस्तक में दी गई रचनाओं के अतिरिक्त रचनाएँ भी बच्चों को सुनाएँ। शिक्षक के लिए ज़रूरी है कि अच्छी कहानी, कविताओं का चयन करें। ऐसी रचनाएँ जिनकी भाषा के विकास की दृष्टि से उपयोगिता हो, जिनकी वाक्य रचना और शब्दावली कृत्रिम न हो और जिनमें रोज़मर्रा की भाषा का पुट हो।

पढ़ना सिखाने के लिए सबसे अच्छी सामग्री शिक्षक ही बना सकते हैं। रोचक कहानियों, कविताओं, गीतों एवं खेलगीतों का संग्रह बना सकते हैं। पढ़ने में बच्चे की रुचि शिक्षक ही जगा सकता है। इसमें शिक्षक का स्नेहिल व्यवहार एवं पठन कौशल विकसित करने के लिए चुनी गई सामग्री एवं सामग्री के उपयोग की अहम भूमिका है। बच्चे का पढ़ना सीख लेने के बाद अपने इस नए कौशल को विविध उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल करने की प्रेरणा भी शिक्षक को देनी होगी तभी पढ़ना बच्चे के व्यक्तित्व के समग्र विकास का हिस्सा बन सकता है।

इस प्रकार रोचक कहानियों, कविताओं और तस्वीरों पर बच्चों से बातचीत करके उनमें पढ़ने की इच्छा जगाकर उन्हें पढ़ना सिखाया जा सकता है। जब बच्चा अपनी जिंदगी और आसपास हो रही चीज़ों के बारे में आत्मविश्वास से बातें करने लगे तो समझिए कि वह लिखना सीखने के लिए तैयार है। बच्चे को सुनाई गई कहानी-कविताओं तथा उस दौरान दिखाए गए चित्रों के इस्तेमाल के दौरान की गई गतिविधियों से उपजी बातचीत से प्रत्येक बच्चे के लिए एक शब्द या वाक्य चुनें तथा उसे बच्चे की कॉपी पर साफ़-साफ़ लिख दें। फिर उसे पढ़कर सुनाएँ। इसके बाद बच्चे से कहें कि वह आपकी लिखावट को उतारे या

उसी पर लिखे। रोज़ जब आप बच्चे को एक नया शब्द या वाक्य लिख कर दें तो पिछली सामग्री अवश्य दोहराएँ। बच्चे से कहें कि पिछले शब्दों या वाक्यों को पढ़कर सुनाए और जब उसे दिक्कत हो तो आप पढ़कर सुनाइए। साथ ही जब रोज़ नया वाक्य लिखने और पुराने वाक्य सुनने के लिए बच्चे के पास बैठें तो वाक्यों को थोड़ा विस्तार देकर उन पर बातचीत करना ना भूलें। आप जब बच्चे की लिखाई रोज़ देखेंगे तो पाएँगे कि अलग-अलग अक्षरों में उसे एक बराबर कठिनाई नहीं होती। कुछ अक्षर ज्यादा अभ्यास माँगते हैं और उनका अभ्यास जितनी बार चाहे कराया जा सकता है। लक्ष्य यह है कि जो भी भाषा आप सिखा रहे हैं उसकी वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर को लिखने और पहचानने में बच्चा प्रवीण हो जाए।

परंतु पढ़ने-लिखने में प्रवीणता हासिल करने में बच्चों को समय लगेगा। आपको धीरज रखना होगा। कुछ बच्चे पहली कक्षा के अंत तक तो कुछ दूसरी कक्षा में अच्छी तरह पढ़ना सीख लेंगे। यदि कोई बच्चा आपके बार-बार प्रयास करने के बावजूद आपकी उम्मीद के मुताबिक प्रदर्शन नहीं कर पा रहा है तो निराश न हों। न ही बच्चे को मंदबुद्धि समझने की गलती करें। प्रत्येक बच्चे की सीखने की अपनी ही गति होती है। आप सकारात्मक दृष्टिकोण रखकर और बच्चे की सराहना करके इस गति को बढ़ा सकते हैं।

एक और तरीके से आप वांछित परिणामों की उम्मीद कर सकते हैं। जब कभी अवसर मिले, बच्चों को छोटे-छोटे समूहों में बाँटकर कार्य करवाइए। जब छोटे समूहों में बच्चे बातचीत करते हैं, पढ़ने-लिखने का काम करते हैं, तब वे बिना किसी संकोच या डर के एक-दूसरे से अनगिनत बातें सीख लेते हैं। परंतु यहाँ अपनी भूमिका को कम करके न आँकें। समूहों में काम करवाते समय आपकी जिम्मेवारी बढ़ जाती है। आपको प्रत्येक समूह पर नज़र रखनी होती है कि वे सही दिशा में बढ़ रहे हैं या नहीं। साथ ही आपको यह भी ध्यान में रखना होता है कि आपकी भूमिका एक मित्र की रहे, केवल आदेश देने वाले शिक्षक/शिक्षिका की नहीं। आप बच्चे के मित्र बनकर ही उसका विश्वास जीत सकते हैं।

पढ़ना यानी एक सृजनात्मक और संरचनात्मक अनुभव

मीनाक्षी खार*

हम सब यह भली-भाँति जानते हैं कि पढ़ना आने का महत्त्व क्या होता है। स्कूल की गतिविधियों में सबसे महत्वपूर्ण है — पढ़ना सिखाना और सीखना। हमारे लिए यह जान लेना भी ज़रूरी है कि बच्चे पढ़ने की शुरुआत स्कूल आने से पहले ही कर लेते हैं। हो सकता है यह शुरुआत औपचारिक रूप से यानी किताबों से न हुई हो। बल्कि वातावरण में उपस्थित प्रिंट पढ़ने की समझ बनाने में महत्वपूर्ण रहा हो। समझ कर पढ़ना हमारे व्यक्तित्व को सुदृढ़ बनाता है और हमें आत्मविश्वास देता है। पढ़ने की प्रक्रिया में हम न केवल इस सजीव संसार अपितु उस लोक में भी पहुँच जाते हैं जो हमसे परे है, हमसे कोसों दूर है। साहित्य इसका मुख्य उदाहरण है।

फ्रेंक स्मिथ ने पढ़ने को लेकर किए गए अनुसंधान/सर्वेक्षण इत्यादि द्वारा एक महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनके विचारों ने पढ़ने के संसार में खलबली ही नहीं मचायी बल्कि शिक्षकों को चौंकाया और उत्साहित भी किया। वे मानते हैं कि पढ़ने की प्रक्रिया उच्च स्तरीय सोचने और सीखने की प्रक्रिया से एक शृंखला की तरह जुड़ी हुई है। स्मिथ मानते हैं कि पढ़ना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है जो पाठक को छपी सामग्री से कहीं आगे ले जाती है।

पढ़ने की प्रक्रिया में पाठक मुख्य भूमिका निभाते हैं या ऐसा कहा जा सकता है कि पढ़ने का सारा दारोमदार पढ़ने वाले पर ही होता है। दूसरी ओर, वर्ण पहचानना ही पढ़ने का महत्वपूर्ण कार्य नहीं है और वर्ण की पहचान एक आसान प्रक्रिया भी नहीं है। ध्वनियों और वर्णों में कई बार पूरा तालमेल नहीं होता है। ऐसे में पढ़ने की प्रक्रिया का पहला कदम काफ़ी जटिल माना जाता है। अंग्रेज़ी पढ़ने में यह समस्या काफ़ी उभरकर आती है। स्मिथ शिक्षकों और विशेषज्ञों का ध्यान इस समस्या की ओर खींचते हैं जो काफ़ी हद तक सही भी है। पढ़ना केवल वर्ण या शब्दों को पढ़ लेना ही नहीं है, पढ़ना है समझकर पढ़ना, शब्दों में एक ऐसा अर्थ ढूँढ़ना जिसका पाठक के साथ एक आत्मीय रिश्ता होता है। वास्तव में पढ़ना बेहद ही सृजनात्मक और संरचनात्मक क्रियाकलाप है। पढ़ना

*प्रवक्ता, भाषा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016

एक ऐसी क्षमता है जिसमें पाठक के अपने पूर्व अनुभव भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जो पाठक दी गई पढ़ने की सामग्री को समझ नहीं पाता उसके लिए केवल वर्णों और शब्दों की पहचान एक अर्थहीन क्रिया है। पढ़ने का सीधा संबंध पाठक के साथ होता है। यह कुछ आश्चर्यजनक लग सकता है परंतु स्मिथ इस तथ्य को बहुत खूबसूरती से प्रस्तुत करते हैं। हम सब अपने अनुभव से जानते हैं कि हम, यहाँ तक कि एक छोटा बच्चा भी, अपनी समझ के अनुसार अपने संसार का ताना-बाना बुनता रहता है। अपने अनुभव, यादें जो नितांत हमारी अपनी हैं, शायद किसी के साथ बाँटी भी नहीं गई हों वे हमारे मस्तिष्क में कहीं-न-कहीं अपनी जगह बनाते हैं। और यही अनुभवों का खट्टा-मीठा भंडार पढ़ते समय पढ़ने की प्रक्रिया में मदद करता है और उसे सुंदर व सजीव भी बनाता है। स्मिथ बताते हैं जो कुछ भी हम जानते हैं तथा जिन तथ्यों और अनुभवों पर हम विश्वास करते हैं, हमारी आशाएँ, और संभावनाएँ, सभी एक सिद्धांत के रूप में हमारे मस्तिष्क में समाहित हो जाता है और पढ़ने की प्रक्रिया में लिखित सामग्री को समझने में हमारी सहायता करता है। इसीलिए स्मिथ का कहना है कि पढ़ना केवल लिखित सामग्री को पढ़ लेना मात्र नहीं होता बल्कि उसे समझना होता है और मुख्य बात यह है कि पाठक अपने पूर्व अनुभवों की भरपूर मदद लेता है। फ्रेंक स्मिथ नए और रोचक तथ्यों को उजागर करते हैं जैसे कि पढ़ने का संबंध न्यूरो-बायोलॉजिकल पक्ष से भी होता है। हमारी आँखें पठन सामग्री को देखती हैं और हमारा मस्तिष्क उस सामग्री का अवलोकन करता है। यदि पठन सामग्री की संरचना इस तरह की गई हो कि पाठक के पास उसको समझने के लिए पिछले अनुभव ही नहीं हैं, तो ऐसा मानना उचित होगा कि उस विषय में पाठक की रुचि जगाने के लिए हमें कुछ और तरीकों की ज़रूरत है। ऐसी बहुत सी पठन सामग्री यदि एकत्रित हो जाती है और पाठक उसे समझने में असमर्थ रहता है तो एक किस्म की tunnel vision की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें पाठक पढ़कर समझने में असमर्थ रहता है और अंधेरे में ही हाथ-पाँव मार रहा है।

हमारे अपने पढ़ने के अनुभव यह बताते हैं कि पढ़ना एक व्यक्तिगत अनुभव है। पाठकों की अपनी रुचियाँ होती हैं। पठन सामग्री को लेकर, पुस्तकों का चुनाव हमारी अपनी पसंद पर निर्भर करता है। फ्रेंक स्मिथ इस चर्चा को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि हमारे पास पढ़ने के मुख्यतः दो उद्देश्य होते हैं - हम

या तो जानकारी के लिए पढ़ते हैं या फिर अपने ज्ञान के विस्तार के लिए। वर्णों को पहचानना ज्ञान पर आधारित प्रक्रिया है और यह अपने आप में एक पूर्ण क्रिया है, जबकि पढ़ना होता है समझ के साथ, अपने पूर्व अनुभवों और अनुमान की मदद से पढ़ना और समझना। वे अपनी पुस्तक में पढ़ने की प्रक्रिया में वर्तनी, अर्थ, शब्द पहचान के महत्त्व को भी विस्तार से बताते हैं। इसके साथ स्मिथ इस बात पर भी जोर देते हैं कि एक कुशल पाठक पढ़ते समय अपरिचित शब्दों पर ज्यादा ध्यान नहीं देते और पढ़ने की धारा को टूटने नहीं देते और अपनी एकाग्रता, रुचि को कोई भी बाधा नहीं पहुँचाते। अपरिचित शब्द की समझ या तो संदर्भ से निकाल लेते हैं या अपनी सुविधा से शब्दकोश से उसका सही अर्थ देख लेते हैं। इस सारी प्रक्रिया में यह ध्यान में रखना ज़रूरी है कि कुशल पाठक पढ़कर समझने में अपना सारा ध्यान लगाते हैं। उनका यह कहना बिलकुल वाजिब है कि कोई भी कृत्रिम तरीके से बनाया गया कार्यक्रम समझ कर पढ़ने के कौशल को बढ़ावा नहीं देता। यदि हम अपने आस-पास के स्कूलों की पहली और दूसरी की कक्षाओं को ध्यान से देखें तो पाएँगे कि इस स्तर पर अध्यापक पढ़ना सिखाने के कुछ तरीके इस्तेमाल करते हैं। सही गलत की पहचान किए बिना, आँख मूँद कर उन पर विश्वास कर लिया जाता है, उदाहरण के लिए वर्णमाला का रटना, ध्वनि, अक्षर की पहचान, शुद्ध उच्चारण इत्यादि। यह सब क्रियाएँ यांत्रिक कौशलों के वर्ग में आती हैं। समझना यह है कि यह पढ़ना सीखने की क्रिया का आधार नहीं है। समझ के साथ पढ़ना एक कला है, पाठक के व्यक्तित्व का एक अंग है जिसे संवेदनशील शिक्षक ही समझ सकते हैं। इस तथ्य के साक्ष्य मौजूद हैं कि एक नन्हा बच्चा जब स्कूल में प्रवेश करता है तो वह अपने अनुभवों के भंडार के साथ ही कक्षा में पढ़ना आरंभ करता है। शिक्षक एवं हमारी शिक्षा प्रणाली को चाहिए कि इस अनुभव के भंडार को व्यर्थ न जाने दें बल्कि समझ कर पढ़ने की प्रक्रिया में इसका उपयोग करें। क्योंकि ऐसा करने से पढ़ने की प्रक्रिया सरल हो जाती है और नन्हा पाठक एक नए आत्मविश्वास का अनुभव करता है। स्मिथ यह सुझाव भी देते हैं कि पढ़ने की संस्कृति बनाने के लिए, बच्चों का पढ़ने को लेकर उत्साह बनाए रखने के लिए कुछ गतिविधियों का होना ज़रूरी है। हमें पढ़ने का एक ऐसा माहौल बनाना होगा जहाँ बच्चे सहज तरीके से पढ़ना सीख पाएँ। ऐसे में बच्चों को एक छोपे शब्दों से संपन्न वातावरण देना बहुत ज़रूरी है। कक्षा में पुस्तकों की मौजूदगी, दीवारों पर सोच-समझ कर करीने से लगाई छपी/लिखी सामग्री, बैठने की व्यवस्था में पढ़ना यानी एक सृजनात्मक और संरचनात्मक अनुभव

बदलाव और अध्यापक का पाठ्यपुस्तक की सीमाएँ लाँघना भी अति आवश्यक है। हमारे लिए यह मानना ज़रूरी है कि पढ़ने की प्रक्रिया स्कूल आने से पहले और स्कूल के बाद भी चलती रहती है। इससे कक्षा में पढ़ने का माहौल ठोस बनता है। पढ़ने का माहौल स्कूलों या कक्षाओं में पठन क्लब गठित कर बनाया जा सकता है। बच्चों को पढ़ने के लिए उत्साहित करने के लिए शिक्षकों को हर संभव चेष्टा करनी चाहिए।

जबकि पठन को भाषा शिक्षा का महत्वपूर्ण अवयव माना जाता है, स्कूली पाठ्यक्रम सूचनाओं और रटंत पाठों से इतने भरे होते हैं कि सिर्फ पढ़ने के लिए पढ़ने का आनंद कहीं दूर छूट ही जाता है। पढ़ने की संस्कृति के विकास के क्रम में वैयक्तिक पठन को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है, और शिक्षकों को इस संस्कृति का हिस्सा बनकर स्वयं उदाहरण पेश करना चाहिए। इसके लिए स्कूल और सामुदायिक स्तर पर पुस्तकालयों को बढ़ावा देने की ज़रूरत है। यह मान्यता कि कथा-उपन्यास पढ़ना समय नष्ट करना है, पठन को हतोत्साहित करने का बड़ा कारण है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 (पृ.सं.-47)

पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका

लता पाण्डे*

सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत किए जा रहे प्रयासों के फलस्वरूप पहली कक्षा में बड़ी संख्या में बच्चे दाखिला ले रहे हैं। हमारी शिक्षा व्यवस्था में बच्चों के लिए कई योजनाएँ हैं— मिड डे मील, मुफ्त यूनीफॉर्म, पाठ्यपुस्तकें आदि। शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के उद्देश्य से प्रतिवर्ष शिक्षकों के लिए कितने ही प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं लेकिन फिर भी बच्चों की उपलब्धि के आँकड़े संतोषजनक नहीं हैं। शिक्षण व्यवसाय में आने से पूर्व प्रशिक्षण के दौरान ज्ञान के सिद्धांतों की जानकारी प्रत्येक प्रशिक्षार्थी में कूट-कूट कर भरी जाती है। शिक्षक बनने के बाद भी प्रतिवर्ष सेवारत प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी पुनः इन सिद्धांतों का स्मरण करवाया जाता है, इन्हें दोहराया जाता है। इनके आधार पर प्रोजेक्ट कार्य करवाए जाते हैं। फिर क्या कारण है कि ज्ञान के सिद्धांतों में पारंगत ये शिक्षक पढ़ने में बच्चों की रुचि नहीं जगा पाते, उन्हें पढ़ना नहीं सिखा पाते। यह जानने के लिए आइए उन कारणों की तह में जाएँ। उन कारणों की जड़ें तलाशें जिनकी वजह से नन्हे बच्चे किताबों से दूर होते जाते हैं। बच्चे सही मायनों में पढ़ना सीख पाएँ इसके लिए शिक्षकों को ज्ञान के सिद्धांतों की जानकारी से अधिक इस बात का अहसास होना ज़रूरी है कि पढ़ना सिखाने की बुनियाद प्यार, भरोसा और आत्मीयता है। इनके बिना ज्ञान का कोई भी सिद्धांत पढ़ना नहीं सिखा सकता है।

शिक्षक का स्नेहिल व्यवहार

प्यार, भरोसा और आत्मीयता ऐसी चीजें हैं जिन्हें किसी योजना के तहत बच्चों को नहीं दिया जा सकता है। इनका न तो कहीं से बंदोबस्त हो सकता है, न ही इन्हें खरीदा जा सकता है और न ही इनका कहीं से प्रबंधन ही किया जा सकता है। हाँ, इन तीनों का प्रबंध कोई कर सकता है तो वह है शिक्षक। शिक्षक का बच्चे से प्यार, उसके प्रति विश्वास तथा उससे आत्मीय व्यवहार ही बच्चे में पढ़ने का कौशल सही ढंग से विकसित कर सकता है। बच्चे को स्नेह देने, उस पर भरोसा करने के साथ शिक्षक उससे इस प्रकार आत्मीयता के साथ पेश आए कि बच्चे को लगे कि विद्यालय में भी कोई उसका अपना है। हर बच्चे को लगे

*रीडर, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016

कि शिक्षक उस पर ध्यान दे रहा है। उसे यह महसूस हो कि हाँ, यह मेरे लिए हो रहा है। पढ़ने का कौशल इसी आत्मीयता का याचक है।

बच्चा ठीक से नहीं पढ़ पा रहा है या बच्चे की सीखने में गति धीमी है तो कई बार शिक्षक द्वारा यह मान लिया जाता है कि इस बच्चे पर ध्यान देना समय की बर्बादी है यह तो कभी सीख ही नहीं पाएगा। अगर हम आते ही बच्चे को नकारते हैं तो शुरुआत में ही बच्चा हतोत्साहित हो जाता है और एक लड़खड़ाते आत्मविश्वास वाले बच्चे से कुछ पढ़ने, कुछ सीखने की उम्मीद क्या कभी की जा सकती है?

ज़रूरी है शिक्षक में स्वयं पढ़ने की समझ

शिक्षक की संवेदनशीलता बच्चे को पढ़ने की ओर ले जाने में मददगार होती है। समझ के साथ पढ़ना एक कला है जिसे संवेदनशील शिक्षक ही समझ सकता है। नन्हा बच्चा अनुभवों के भंडार के साथ कक्षा में पढ़ने की शुरुआत करता है। शिक्षक को चाहिए कि इस अनुभव के भंडार को व्यर्थ न जाने दे। बच्चे को पढ़ने की आज़ादी दें, पढ़ते समय अपने अनुभवों का इस्तेमाल करने दें, अनुमान लगाने दें, ताकि बच्चे के लिए पढ़ने की प्रक्रिया सरल हो जाए और नन्हा पाठक आत्मविश्वास से भर उठे।

शिक्षक के लिए स्वयं यह जानना ज़रूरी है कि दरअसल पढ़ना है क्या? बच्चा पढ़ना कैसे सीखता है? पढ़ना सीखने में सबसे बड़ी बाधा तब आती है जब कक्षा में किताब पढ़ते समय बच्चे से गलती हुई नहीं कि उसे तुरंत डाँट दिया जाता है – इतना भी नहीं पढ़ सकते। परिणाम यह होता है कि फिर गलती के डर से बच्चा पढ़ता ही नहीं है। शिक्षक को यह समझ बनानी होगी कि बच्चा पढ़कर ही पढ़ना सीखता है। पढ़ना बगैर गलतियों के नहीं हो सकता। जो वयस्क गलत पढ़ने को बेवकूफी समझते हैं वे पढ़ने की बुनियादी प्रवृत्ति को नहीं समझते। शिक्षक यह बात हमेशा ध्यान में रखें कि कोई भी निर्देश पद्धति जो पढ़ने में बाधा पहुँचाती है, वह पढ़ना सीखने में भी ज़रूर बाधा पहुँचाएगी। पढ़ना सीखना आसान बनाने का एकमात्र तरीका पढ़ने को आसान बनाना है। पढ़ना सीखना आसान बनाने का मतलब है कि जब बच्चे को चाहिए तब संकेत मिले, जब ज़रूरी हो तब टिप्पणी मिले, जब ज़रूरत हो तब शाबाशी मिले।

पढ़ने की प्रक्रिया में अनुमान लगाने की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। बच्चों को पढ़ना सीखने की प्रक्रिया के दौरान अनुमान लगाने के अवसर मिलें

तो पढ़ते समय वह पूरी तरह से सक्रिय हो जाता है। चित्रों को देख या बगैर चित्र के भी अनुमान लगाते-लगाते जब वह कुछ पढ़ लेता है तो उसे खुशी मिलती है - हाँ, मैं पढ़ सकता/सकती हूँ। इस खुशी से जुड़ा है आत्मविश्वास। आत्मविश्वास से भरपूर बच्चा आगे भी पढ़ने की कोशिश करता है और पढ़ने की यह ललक दिनों-दिन बढ़ती चली जाती है। दुर्भाग्य से हमारी शिक्षा व्यवस्था में शुरुआती कक्षाओं में पूरा ध्यान वर्णों की आकृति, ध्वनि सिखाने में ही लगाया जाता है। बिना सार्थक संदर्भ के बारहखड़ी रट लेना बच्चे को नीरस लगता है। लेकिन बड़े यही मानकर चलते हैं कि अक्षरों और ध्वनियों में संबंध स्थापित करते हुए धीरे-धीरे बच्चे पढ़ना सीख जाएँगे। इस पद्धति से भले ही कुछ बच्चे पढ़ना सीख जाएँ, पर स्थायी पाठक बनने से कोसों दूर रह जाते हैं। इस पद्धति में बच्चे को यह सुख नहीं मिल पाता, जो कुछ सार्थक पढ़ने से मिलता है कि - हाँ, मैंने खुद कुछ पढ़ा।

इसलिए यह बहुत जरूरी है कि बच्चे को अनुमान लगाते हुए पढ़ने के मौके शुरुआती कक्षाओं से ही दिए जाएँ। अधिकतर शिक्षक बच्चों में पढ़ने के कौशल के विकास के लिए पाठ्यपुस्तक को ही एकमात्र साधन मानते हैं। ऐसे शिक्षकों को अपने इस दृष्टिकोण में बदलाव लाना होगा। पाठ्यपुस्तकें पढ़ना सिखाने का एक साधन है, एकमात्र साधन नहीं। कहानियाँ बच्चों को बेहद प्रिय होती हैं। रोचक कहानी की किताबें बच्चों को अनुमान लगाने के भरपूर अवसर मुहैया कराती हैं। कक्षा में बालसाहित्य उपलब्ध कराना शिक्षक की ज़िम्मेदारी है। बच्चों के लिए किताबें चुनते समय इस बात का ध्यान रखें कि कहानी बच्चों के परिवेश तथा रोज़मर्रा के अनुभवों से जुड़ी हो। कहानी की भाषा बच्चे की अपनी भाषा से मिलती-जुलती हो ताकि वे कहानी से जुड़ाव महसूस कर सकें। इससे बच्चे अनुमान लगाते समय अपने अनुभवों, व्यावहारिक ज्ञान तथा अपनी बोली जाने वाली भाषा की भी मदद ले सकेंगे।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 भी कक्षा में छपी हुई सामग्री की समृद्धता की संस्तुति करती है।

घर से विद्यालय आते समय रास्ते में लगे साइन बोर्ड, पोस्टर, स्कूल की दीवारों पर लिखे वाक्य, सूचनाएँ, कक्षा की दीवारों में लगे चार्ट, पोस्टर, नक्शे-ये सभी बच्चों को पढ़ना सिखाने के साधन हैं। शिक्षक को कक्षा में पढ़ने का माहौल रचना होगा। ध्यान इस बात का रखना होगा कि जो भी लिखा हो बच्चे

की रुचि का हो, बच्चे के परिवेश से संबंधित हो, जिसे पढ़ने में बच्चे को आनंद मिले।

बच्चा ज्ञान की रचना करता है। नन्हा बच्चा जब किताब पढ़ता है तो कई बार किसी शब्द को न पढ़ पाने की स्थिति में वह उसके स्थान पर कोई और शब्द (जिसका अर्थ उससे मिलता-जुलता है) गढ़ लेता है और वाक्य का अर्थ निकाल लेता है। ऐसे में शिक्षक कई बार उसे तुरंत टोक देते हैं। परिणाम यह होता है कि स्वयं शब्द रचकर वाक्य का अर्थ समझ, कहानी का आनंद लेता बच्चा सहम जाता है। आगे पढ़ने का सारा उत्साह ही चला जाता है। बच्चे पर भरोसा रखें। उसे स्वयं शब्द रचकर अर्थ समझने का आनंद लेने दें। समझकर पढ़ना ही तो पढ़ना है।

शिक्षक पूर्वाग्रहों से दूर रहें

कई बार बच्चों के प्रति शिक्षक के नज़रिए में वे तमाम मूल्य, विश्वास और पूर्वाग्रह छिपे रहते हैं जिनकी जड़ें अतीत की तलछट, समाज के वर्गीय ढाँचे तथा जातियों, समुदायों और अंचलों के आपसी संबंधों में ढूँढ़ी जा सकती हैं। शिक्षक को इन सबसे हटकर हर बच्चे को बच्चे की तरह देखना होगा। हिंदी की आंचलिक बोलियों और उर्दू के प्रति शिक्षकों का रवैया उनकी सामाजिक मान्यताओं और विचारधारा को व्यक्त करता है।

बहुत से शिक्षक बच्चे की स्कूली भाषा में आंचलिकता की महक ठीक नहीं समझते। कहीं न कहीं शिक्षक मानते हैं कि बच्चे के घर और परिवेश की बोली स्कूल में मानक भाषा की पढ़ाई के रास्ते की एक बाधा है। इसी सोच के कारण कक्षा में बच्चे द्वारा घर में बोली जाने वाली भाषा/बोली का प्रयोग करने पर वे बच्चे को डाँट देते हैं। बच्चे की अपनी भाषा की उपेक्षा और तिरस्कार का दुष्परिणाम यह होता है कि बच्चा अपने आप में सिमटकर रह जाता है और आत्मविश्वापूर्वक कक्षा की गतिविधियों में शामिल नहीं हो पाता है। भाषा और बोली के पारंपरिक रूपों की सृजनशील मिलावट से ही मानक भाषा जीवंत बनती है और बचपन की सैकड़ों जरूरतों को पूरा करने की क्षमता हासिल करती है। प्राथमिक शिक्षा के बाद आने वाले वर्षों की शिक्षा का बहाना लेकर बच्चे की आजादी और सहजता पर बंदिशें लगाना दुखद और अनुचित है। पढ़ने के कौशल के विकास के लिए कराई जाने वाली विभिन्न गतिविधियों के आकलन के दौरान भी बच्चे के साथ आत्मीयता जरूरी है।

आकलन में सहजता

पढ़ने से जुड़े कौशलों के विकास के आकलन के लिए बच्चों का व्यक्तिगत स्तर पर अवलोकन आवश्यक है। पढ़ने में दक्षता का क्रमिक विकास किस बच्चे में कितना हुआ है, यह पता लगाने के लिए बच्चों की संख्या को देखते हुए सप्ताह, पखवाड़े या महीने में कम से कम एक बार प्रत्येक बच्चे के साथ अलग से कुछ मिनट शिक्षक को बिताने होंगे जिनमें वह बच्चे का पढ़ना ध्यान से सुन सके। पढ़ने से संबंधित गतिविधियों के दौरान कक्षा में बच्चों का अवलोकन नियमित रूप से होगा।

शिक्षक का सकारात्मक दृष्टिकोण

शिक्षक के सकारात्मक रवैये का बच्चे के प्रदर्शन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। पिगमेलियन प्रभाव भी बच्चों के प्रति शिक्षक के सकारात्मक दृष्टिकोण के सकारात्मक परिणाम की पुष्टि करता है। पिगमेलियन प्रभाव को प्रचलित शब्दों में अध्यापक की आशाओं का प्रभाव कहा जाता है जिसका संबंध उन परिस्थितियों से है जिनमें विद्यार्थी दूसरों के मुकाबले सिर्फ इसलिए बेहतर प्रदर्शन कर लेते हैं क्योंकि उनसे ऐसा करने की आशाएँ रखी जाती हैं। इस प्रभाव से पता चलता है कि विद्यार्थी बड़ों की आशाओं और उम्मीदों को आत्मसात् कर लेते हैं। जिन विद्यार्थियों से कम उम्मीदें रखी जाती हैं वे अपने नकारात्मक लेबल को आत्मसात् कर लेते हैं और सकारात्मक लेबल वाले सफलता से आगे बढ़ते जाते हैं। शिक्षक बच्चों से जैसी उम्मीदें रखते हैं, बच्चों का प्रदर्शन वैसा ही हो जाता है। आप बच्चे के मन में यदि यह विश्वास जगाएँगे कि तुम पढ़ सकते हो, तो बच्चा जरूर पढ़कर दिखाएगा।

कक्षा में अनुशासन : एक नई सोच

अनुशासन के प्रति भी शिक्षकों को अपने रवैये में बदलाव लाना होगा। अधिकतर शिक्षकों का यही मानना है कि यदि कक्षा में एकदम चुप्पी है और शांति का माहौल है तो इसका मतलब है कि बच्चे पूर्ण रूप से अनुशासित हैं। सक्रियता बच्चों का स्वभाव है। बच्चों को मुँह पर उँगली रख, हाथ बाँधकर बैठा देने से क्या वे कुछ सीख सकते हैं? निष्क्रियता शून्यता को जन्म देती है। बच्चे कुछ करके ही सीखते हैं। बच्चों को आज्ञादी दें—कुछ करने की, कुछ रचने की, कुछ पढ़ने की, स्वयं को अभिव्यक्त करने की। बच्चा अपनी रुचि (यह बात एक पढ़ना सिखाने में शिक्षक की भूमिका

आकर्षक किताब के पन्ने पलटना भी हो सकता है) के काम में लगा रहेगा, तो कक्षा में किसी भी प्रकार की अव्यवस्था का सवाल ही नहीं उठेगा।

बच्चे की सक्रियता उसे बहुत कुछ सिखाती है। बच्चा तभी सक्रिय रहेगा जब शिक्षक सक्रिय होगा। फ्रेंक स्मिथ के अनुसार - “पढ़ने के प्रति उत्साह बनाए रखने के लिए गतिविधियों का होना ज़रूरी है।” किताबों के साथ खेल, किताबों के साथ गतिविधियों का आयोजन कर शिक्षक बड़ी सहजता के साथ बच्चों की पढ़ने में रुचि जाग्रत कर सकता है। शिक्षक की सक्रियता ही पढ़ना सीखने की प्रक्रिया के दौरान नन्हे पाठक के कौतूहल को बनाए रख सकती है। शिक्षण का कार्य जड़ता में जीते हुए नहीं किया जा सकता। ज़रूरत है कि शिक्षक अपने अंदर की ऊर्जा से साक्षात्कार करे, अपनी क्षमता को पहचाने।

बच्चे को बिना किसी सार्थक संदर्भ के वर्णमाला रटवाने, स्वयं पढ़ाने के बदले बच्चे में विकसित होने वाले कौशल का उद्दीपन बनें। बच्चे में पढ़ना सीखने की जो नैसर्गिक इच्छा है, उसे पूर्ण करने का माध्यम बनें। इस बात को हमेशा याद रखें कि पढ़ना ऐसा कौशल नहीं है जो पढ़ाया जाए, यह तो धीरे-धीरे विकसित होता है।

पठन शुरू करने का कारगर उपागम

- कक्षा में छपी हुई सामग्री की बहुतायत हो, संकेतों, चार्ट, कार्य संबंधी सूचना आदि उसमें लगे हों ताकि विभिन्न अक्षरों की ध्वनियाँ सीखने के साथ बच्चे लिखित संकेतों की पहचान भी कर सकें।
- कल्पनाशील निवेशों की ज़रूरत है, जिसे एक योग्य पाठक हाव-भाव से पढ़े, आदि।
- विद्यार्थियों द्वारा बताए गए अनुभवों का लेखन और उनके द्वारा उस लिखित पाठ का वाचन।
- अतिरिक्त सामग्री का पठन - कहानियाँ, कविता आदि।
- प्रथम पीढ़ी के विद्यार्थियों को इसका अवसर दिया जाना चाहिए कि वे अपने पाठ स्वयं तैयार करें और स्वयं द्वारा चुने हुए पाठों का कक्षा में योगदान दें।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005

पढ़ने के लिए समय

प्रो. कृष्ण कुमार, निदेशक, एन.सी.ई.आर.टी. से बच्चों की शिक्षा में पढ़ने, पढ़ने के स्थान और पढ़ने की स्थिति को लेकर श्रीमती मालविका राय, परामर्शदाता, रीडिंग डेवलपमेंट सैल, एन.सी.ई.आर.टी. ने बातचीत की। प्रो. कृष्ण कुमार एक प्रतिष्ठित शिक्षाविद् और लेखक हैं। बच्चों और शिक्षा से संबंधित इनके कार्यों और लेखों ने हमेशा लोगों को कुछ करने और सोचने के लिए प्रेरित किया है। यह बातचीत केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान, एन.सी.ई.आर.टी. में रिकॉर्ड की गई थी। प्रस्तुत है यही बातचीत :

प्रश्न – सर, आज हम आपसे विशेष रूप से पढ़ने की स्थिति को लेकर बात करना चाहेंगे। अगर हम अपने अनुभव से बात करें तो परसों मेरी एक महिला से मुलाकात हुई थी। उनका एक बेटा एम.सी.डी. के स्कूल में पाँचवीं कक्षा में पढ़ता है। पढ़ने-लिखने के सिलसिले में उन्होंने बहुत झिझक से कहा कि उनका बेटा अभी भी ठीक से पढ़ नहीं पाता और मेरे खयाल से वह अकेली ऐसी महिला या माँ नहीं थीं, जिनकी यह चिंता है। शिक्षिका होने के नाते मैंने यह स्कूल में देखा है कि बच्चे चौथी-पाँचवीं में पहुँच जाते हैं और पढ़ नहीं पाते या पढ़ पाते हैं तो पढ़े हुए को समझ नहीं पाते। इसके पीछे क्या कारण हो सकता है?

उत्तर – मालविका जी, जाहिर है कि यह एक ऐसा विषय है जिस पर हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था ने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है। पढ़ना बच्चे की प्रगति के लिए एक आधारभूत कौशल और माध्यम है। आप कह सकती हैं कि बचपन आधुनिक समाज का एक अभिन्न अंग है। लेकिन अगर आप एक आम स्कूल में मेरे साथ चलें, चाहे सरकारी हो या प्राइवेट हो, इससे कोई खास फर्क नहीं पड़ता। जो आपने स्थिति बताई है उसकी तह में जाने के लिए मैं आपसे अनुरोध कर रहा हूँ कि किसी स्कूल में चलें तो आप पाएँगी कि अगर आप टाइम-टेबल माँगें तो उसमें हिंदी की या अँग्रेजी की घंटी तो होगी, गणित की भी होगी लेकिन पढ़ने की कोई घंटी अलग से नहीं होगी। अर्थात् पढ़ना जिसको अँग्रेजी के जुमले में हम लोग 'रीडिंग' शब्द से चिह्नित करते हैं, हमारे लिए कोई ऐसा कौशल नहीं

है जिसका सब लोगों को मिल-जुल कर विकास करना है। जबकि शिक्षाशास्त्र या आधुनिक शिक्षा हमसे कहती है कि पढ़े बिना तो आप किसी भी विषय में आगे नहीं बढ़ पाएँगे। दुनिया के अन्य देशों में जिनसे हम अपनी तुलना करने का अक्सर प्रयास करते हैं, पढ़ने के लिए अलग से आरंभिक कक्षाओं में पर्याप्त समय दिया जाता है।

प्रश्न – अगर हम आरंभिक कक्षा की बात करें तो उसके अनुसार आप कह रहे हैं कि हिंदी की घंटी या अँग्रेजी की घंटी के अतिरिक्त पढ़ने की घंटी अलग से हो, तो पहली और दूसरी कक्षा में हिंदी और अँग्रेजी की घंटी का अर्थ ही यही है कि शायद हम उन्हें पढ़ना सिखा रहे हैं। वर्णमाला सिखाना और वर्णमाला सीखकर दो अक्षरवाले शब्दों को जोड़-जोड़ कर पढ़ना, तो शायद हिंदी और अँग्रेजी की घंटी जो प्रारंभिक कक्षा में होती है उसकी पूरी संरचना ही यह होती है कि बच्चे को पढ़ना सिखाया जाए।

उत्तर – काश ऐसा होता! ऐसा लगता है हमको लेकिन वो दरअसल एक भाषा की घंटी है, जिस भाषा का एक नाम है। जबकि पढ़ना एक ऐसा कौशल है जो कि बच्चे का एक सामान्य कौशल है। हिंदी, अँग्रेजी या किसी भाषा के व्याकरण को समझना, उस भाषा के साहित्य में दीक्षित होना ये तमाम उद्देश्य भाषा की शिक्षा के हो सकते हैं। पर सबसे पहले एक कौशल है 'पढ़ना', जिसके ऊपर अलग से फोकस करने पर उस घंटी में बहुत कम समय होता है और इसीलिए हम पढ़ने के कौशल पर वैसा ध्यान नहीं दे पाते हैं, जैसा वो माँगता है। मिसाल के तौर पर अगर आप इस घंटी को पढ़ने की घंटी बनाना चाहते हैं तो कम से कम कक्षा एक से तीन में आपको ऐसा इंतजाम करना पड़ेगा कि हर बच्चे को अलग से अपने अध्यापक के साथ बैठने का कम-से-कम पंद्रह मिनट का समय मिले। अगर प्रतिदिन नहीं मिलता है तो हर तीसरे दिन मिले, तीसरे दिन भी नहीं मिलता है तो हफ्ते में मिले। तब जाकर एक अध्यापक बच्चे के विकसित होते हुए पढ़ने के कौशल को ध्यान से देख और समझ सकता है। लेकिन हमारे स्कूलों में घंटी किसी भी विषय की हो वो एक सामूहिक घंटी ही होती है। आप चालीस बच्चों के सामने एक अध्यापक को रखते हैं और अध्यापक जो कह रहा है वो बच्चे सुनते हैं।

प्रश्न – बिल्कुल! एक प्रश्न यही है कि अगर हम मानकर चल रहे हैं कि हर बच्चे को पंद्रह मिनट अध्यापक के साथ मिलें। पर अक्सर कुछ इस तरह की

बातचीत करने पर ही बात सामने आती है कि कक्षा में हम इतने बच्चों को कैसे सँभालें। अध्यापकों की संख्या कम है तो इस चीज़ को ध्यान में रखते हुए कैसे ये बदलाव लाया जाए?

उत्तर – ज़ाहिर है कि समय-सारणी को हमको एक लचीली चीज़ बनाना होगा। हमारे यहाँ प्राथमिक कक्षाओं की समय सारणी लगभग वैसी ही दिखती है जैसे माध्यमिक या उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं की सारणी। जबकि कक्षा एक और दो जहाँ पढ़ने का कौशल आधारभूत ढंग से विकसित होता है, वहाँ हमें एक ऐसी समय-सारणी रखनी होगी जिसमें इस कौशल के विकास के लिए हर बच्चे के लिए सप्ताह में एक बार पंद्रह मिनट का समय अलग से अध्यापक के साथ निध रित हो और उस समय बाकी बच्चे कुछ और कर रहे हों। प्रतिदिन के कार्यक्रम में भी चालीस-पैंतालीस मिनट का ऐसा कार्यक्रम होना चाहिए जहाँ बच्चों को चार-चार के समूह में बाँटकर अगर चालीस बच्चों की कक्षा है तो दस समूहों में बाँटकर पढ़ने का मौका दिया जाए। यहाँ सवाल उठता है कि पढ़ने के मौके से क्या आशय है जबकि बच्चे अभी पढ़ना सीख ही नहीं पाए हैं?

प्रश्न – क्योंकि अभी तो यह कहा जाएगा कि अभी ये अक्षर ज्ञान ही प्राप्त कर रहे हैं तो इनको पढ़ने के लिए क्या दिया जा सकता है?

उत्तर – यहाँ आप एक तरह से कह लीजिए कि एक मानसिक क्षितिज है जिसे हमको खोलना होगा। हमारे यहाँ पारंपरिक रूप से पढ़ना सिखाने की विधियों में ये मान्यता निहित है कि पहले बच्चों को भाषा के बुनियादी अवयव सिखाए जाएँ और सबसे बुनियादी अवयव माना गया है 'अक्षर' जिसकी एक ध्वनि है। हमारा बहुत समय अक्षर ज्ञान देने में निकल जाता है और अक्षर ज्ञान देने से आशय होता है कि अक्षर की आकृति और उस आकृति के साथ उससे जुड़ी हुई ध्वनि का अभ्यास कराना। आधुनिक मनोविज्ञान हमें यह बताता है कि बच्चों को ऐसी चीज़ पढ़ाना बहुत मुश्किल होता है, जिसका अर्थ वह ना समझ पाएँ या जिसमें उनको कोई अर्थ ना दिखाई दे। यही बात इन पारंपरिक विधियों पर लागू होती है कि अगर आप एक ऐसी आकृति के बारे में बच्चों को बता रहे हैं, जिसमें बीच में एक छड़ी जैसी है जिसकी एक तरफ एक पूरा वृत्त बना है और दूसरी तरफ आधा वृत्त बना है फिर आप कहते हैं ये जो आकृति है इसका नाम है 'क' और आप इसका अभ्यास कराते हैं- ये आकृति बनाओ। बच्चा अपने बहुत छोटे हाथों से आकृति बनाता है। आप कहते हैं इसको बोलो 'क' और इस क्रम में आपको

काफ़ी समय लगाना पड़ता है- 'ख' की आकृति, 'ग' की आकृति इत्यादि। ये जो पूरा आकृति ध्वनि विज्ञान है, इसको छोटे बच्चे की दृष्टि से देखिए तो ये एक बहुत ही उबारू, बोझिल और नीरस काम है। जिसको वो इसलिए करता है क्योंकि एक अध्यापक का उसके ऊपर दबाव है, जो उसके सिर के ऊपर खड़ा है। तो बच्चे को कहना पड़ रहा है कि 'क'। जितनी बार अध्यापक कहेगा, उतनी बार बच्चे को 'क' कहना पड़ेगा। अँग्रेजी में जितनी बार वो कहेगा, उतनी बार कहना पड़ेगा। 'क' या 'ख' में अपने आप में कोई अर्थ नहीं है, ये अर्थ तो भाषा में तब उभरते हैं जब अक्षरों की मदद से कोई शब्द की आकृति बनती है और उस आकृति में भी कोई अर्थ नहीं है। वो अर्थ तो तब अर्थ बनता है, जब हम इस संसार में किसी चीज़ को चिह्नित करने के लिए या किसी और का ध्यान इसकी और दिलाने के लिए इस शब्द का प्रयोग एक संदर्भ में करते हैं। यानि वाक्य एक ऐसी बुनियादी संरचना है जिसमें कोई अर्थ प्रकट हो सकता है। और अक्सर अलग से वाक्य में भी कोई अर्थ नहीं होता। वो अर्थ तभी प्रकट होता है जब वाक्य किसी संदर्भ में इस्तेमाल किया जाए। जैसे अगर मैं कहूँ कि 'ये मेज़ खाली है इसमें ये किताब पड़ी है'। अब अगर आप किसी बच्चे को यह पूरा वाक्य दें कि इस मेज़ पर यह किताब पड़ी है और वहाँ एक चित्र बना हुआ हो जिसमें एक मेज़ पर एक किताब पड़ी हुई है। तो एक बच्चा जो बिल्कुल ही अक्षर पहचानना नहीं जानता उससे भी अगर आप कहेंगे कि देखो यहाँ वो लिखा है जो वहाँ उस चित्र में बना है, तो बताओ यहाँ क्या लिखा होगा। तो बच्चा अनुमान लगाएगा कि जरूर यहाँ मेज़ के बारे में कोई बात लिखी होगी और अगर आप उसे दिखा दें कि देखो मेज़ यहाँ लिखा है तो अगली बार जब आप उसे मेज़ शब्द कहीं दिखाएँगे, तो वह पहचान लेगा। भले ही वो म, ए की मात्रा और ज़ लिखना नहीं जानता है यानि मेज़ को एक सार्थक संदर्भ मिल रहा है। और उन अक्षरों और आकृतियों को भी एक सार्थक संदर्भ मिल जाएगा। बाद में चलके आप उसको बताएँगे कि इस मेज़ शब्द में ये दो आकृतियाँ हैं। आप चाहें तो उसे वर्णमाला पहचानने के लिए भी कह सकती हैं। लेकिन ये जो क्रम है ये आज की पद्धतियों से उलट होगा।

प्रश्न – इस पद्धति पर हमने कभी प्रश्न ही नहीं किया कि इस पद्धति के अलावा भी कोई पद्धति हो सकती है और वर्णमाला पद्धति के हम इतने कायल हो गए हैं कि यह सवाल उठता है कि यह बदलाव कैसे आ सकता है?

उत्तर – यह बड़ा कोमल-सा परिवर्तन है। आप कह रही हैं कि अक्षरों से अर्थ की तरफ जाने की जगह, अर्थ से अक्षरों की ओर चलें। मेरी समझ में अगर अध्यापक को यह समझाया जाए और अध्यापकों से पहले अध्यापकों के प्रशिक्षकों को यह समझाया जाए कि देखिए पढ़ना एक ऐसी चीज़ है जिसमें मनुष्य का दिमाग और उसकी आँखें दोनों काम आती हैं। वह लगातार यह माँग करता है कि दिमाग छोटे बच्चे का हो या बड़े का हो उसे जो पढ़ने को दिया जा रहा है उसमें कोई अर्थ है, इस अर्थ को ढूँढ़े। अगर हम उनको सार्थक संरचनाएँ देंगे तो वो पढ़ना ज़्यादा जल्दी सीख जाएँगे और इन संरचनाओं को तैयारी के तौर पर अगर हम कहानियाँ और कविताएँ सुनाकर उन्हीं कहानियों से जुड़े हुए बिंब कुछ वाक्यों के साथ देंगे तो वो जल्दी सीख जाएँगे। लेकिन ऐसा क्यों होगा ये बताने के लिए हमें अध्यापक को भाषा का मनोविज्ञान जिसे मनोभाषा विज्ञान Psycho Linguistics कहते हैं, उसका थोड़ा बहुत परिचय तो देना ही होगा। क्योंकि हमारा अध्यापक पारंपरिक शिक्षणशास्त्र में डूबा हुआ है। आपने बहुत सही कहा कि हमने इस पर सोचा ही नहीं है। अब हमने नहीं सोचा तो एक आम अध्यापक जो कि आम प्रशिक्षण कार्यक्रमों से निकल कर आ रहा है उसने तो बिल्कुल ही नहीं सोचा। तो उसे सोचने के लिए प्रेरित करना होगा। तब अगर वह एक बार आपकी बात मान गया कि सार्थक संरचनाओं में पढ़ाना ज़्यादा मुनासिब है, उस स्थिति में बच्चे का उत्साह भी बना रहेगा। उसकी जिज्ञासा तो प्राकृतिक है उसके इस्तेमाल से वो इस दिशा में आगे बढ़ेगा और समझ आने पर वर्णमाला भी सीख लेगा। वर्णमाला तो आप कह सकती हैं एक औज़ार है जिसकी ज़रूरत पढ़ने पर हम सब उसको सीख लेते हैं। लेकिन पढ़ना सिखाना कोई औज़ार विज्ञान नहीं है। पढ़ना सिखाना तो इस जगत में अर्थ ढूँढ़ने के क्रम का एक हिस्सा है।

प्रश्न – आपने अर्थ ढूँढ़ने, सार्थक संदर्भ में पढ़ने, किताबों-कहानियों की बात की। मैं बार-बार कक्षा की संरचना पर आ रही हूँ और जिस तरह से एक कक्षा व्यवस्थित होती है, पाठ्यपुस्तक होती है और पढ़ाने की जो पद्धति होती है, बच्चों को पढ़ने के मौके देने के लिए क्या एक पाठ्यपुस्तक काफ़ी होगी?

उत्तर – देखिए, पहले सवाल यह है कि पाठ्यपुस्तक क्या चीज़ है और कक्षा एक और दो की पाठ्यपुस्तक की संकल्पना कैसे की जाए? अगर आप भौतिक शास्त्र की पाठ्यपुस्तक की बात करें तो उसका अर्थ होता है कि एक ऐसी किताब जिसमें फ़िजिक्स नाम के एक विषय के बारे में प्रामाणिक जानकारी दी गई है।

पढ़ने के लिए समय

लेकिन जब आप कक्षा एक की पाठ्यपुस्तक की बात करते हैं तो जाहिर है कि हम बच्चे की कई आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर ही ये संकल्पना कर सकते हैं। जैसे बच्चा उस उम्र में हर चीज़ से खेलना चाहता है। बच्चा अर्थों को ढूँढ़ना या कल्पित करना चाहता है। वो ध्वनियों, लयों और रंगों की दुनिया में खोना चाहता है। उसके सामने एक बनी बनायी दुनिया नहीं है। दुनिया को तो वो बना रहा है इसलिए कक्षा एक की जो पाठ्यपुस्तक है, सबसे पहले तो उसको रोचक होना चाहिए तब वो एक पाठ्यपुस्तक बनेगी। जाहिर है कि अगर वह एक रोचक पुस्तक है तो वो पढ़ने की इच्छा पैदा करेगी और ऐसी स्थिति में उस इच्छा की पूर्ति के लिए कई अन्य छोटी पुस्तकें होनी चाहिए जो कि पाठ्यपुस्तक के साथ में चल सकें। उसकी कोशिश को बढ़ा सकें। तो यहाँ बाल साहित्य की आवश्यकता उत्पन्न होती है।

छोटे बच्चों के लिए उपयुक्त बाल साहित्य जिसमें कि चित्र बहुत हों, आलेख कम हों और जो सहज ही बच्चों को आकर्षित कर सकें। ऐसी पुस्तकों की आवश्यकता होगी, जिनको बच्चे स्वयं अपने प्रयास से पढ़ते चले जाएँ और धीरे-धीरे एक चरण से दूसरे चरण में गुजरते हुए कक्षा एक या दो तक आते-आते पढ़ने के बुनियादी कौशल को प्राप्त कर लें और उसका इस्तेमाल अन्य विषयों के लिए करने की उनमें क्षमता आ जाए।

प्रश्न – यानि अध्यापकों को अपनी तरफ़ से कम से कम यह कोशिश जरूर करनी चाहिए की वो जिस तरह से भी पढ़ने का एक सार्थक परिवेश बच्चों को अवश्य दें। और पाठ्यपुस्तकों के अलावा भी हम जिस तरह के बाल साहित्य की बात कर रहे हैं, वो साहित्य उपलब्ध करवाएँ और बच्चों को उस तरह से पढ़ने के मौके दें।

उत्तर – सबसे पहले तो मैं अपेक्षा करूँगा कि वो बच्चों को करुणा के साथ उत्साहित करें। हमारे अध्यापक जगत में बहुत-सी कठोरता अभी बची हुई है। अगर एक बच्चा एक-दो महीने बहुत अच्छा नहीं पढ़ पा रहा है तो अध्यापक उसके प्रति एक कठोर रवैया अपना लेता है। वह मान लेता है कि 'तू बिलकुल पिछड़ गया' और हमारे स्कूल इतने ज्यादा प्रतियोगी हो गये हैं कि पहले ही वर्ष के नवंबर-दिसंबर माह तक आते-आते उनमें दमघोटू वातावरण पैदा हो जाता है। मैं जानता हूँ, आज भी कई विद्यालयों में कक्षा एक के बच्चों की परीक्षा ली जा रही है। जहाँ परीक्षा की कोई मान्यता नहीं है तो मैं ऐसी स्थिति में पहली अपेक्षा

तो यह करता हूँ कि अध्यापकों को बच्चों के प्रति एक बढ़ा ही उत्साही रवैया अपनाना होगा। भले ही बच्चे किस स्तर पर हैं। हर बच्चा हर स्तर पर हो सकता है। उस स्तर पर ही उसको आगे बढ़ाने के लिए उपयुक्त साहित्य सामग्री देनी होगी और यह भी ध्यान रखना होगा कि हर बच्चा अलग तरह से पढ़ने की दुनिया में प्रवेश करेगा इसलिए अध्यापक में ये जिज्ञासा भी होनी चाहिए कि वो हर बच्चे को गौर से देख और सुनकर यह समझने की कोशिश करे कि ये बच्चा इस यात्रा को किस तरह से संपन्न कर रहा है। यानि अध्यापक स्वयं एक प्रकार का वैज्ञानिक बन जाएगा। और तब वह जान लेगा कि बच्चा इस तरह पढ़ने की कोशिश कर रहा है तो वह स्वयं उसको उस तरह से पढ़ने की कोशिश में आगे बढ़ाने का प्रयास करेगा। ये जो पहली वाली बात थी मैं समझता हूँ, उसी पर हम लोगों को लौटना चाहिए कि हर बच्चे के लिए, बच्चे की जितनी भी संख्या है उसको ध्यान में रखकर हफ्ते के एक पखवाड़े में जितना भी संभव है, एक ऐसा कालांश दिया जाए जिसमें कम से कम पंद्रह मिनट केवल एक बच्चा और अध्यापक साथ में हों और जब ये मौके महीने में कम से कम दो या चार बार मिलेंगे तो अध्यापक को हर बच्चे में रस आने लगेगा। कोई भी बच्चा उसको ऐसा नहीं लगेगा जो कि किसी लायक नहीं है। जो कि हम आज के समय में बहुत से बच्चों के साथ होता हुआ देखते हैं। और इससे ही वो दुर्घटना पैदा होती है जिससे आपने अपनी बातचीत शुरू की थी।

मालविका – आपने एक बात काफ़ी महत्वपूर्ण कही कि शिक्षक को कक्षा में एक वैज्ञानिक बनना पड़ेगा। मेरे खयाल से शिक्षक पर यह बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है कि हर तरह से जिस भी परिस्थितियों में वह काम कर रहे हैं, उसके बावजूद हम इन बातों का ध्यान रखें कि हम बहुत प्यार और रुचि से बच्चों को पढ़ाएँ।

प्रो. कृष्ण कुमार – साथ ही समय-सारणी में पढ़ने के लिए एक अलग घंटी रखें। जो हिंदी या अँग्रेज़ी की घंटी नहीं है। वह सिर्फ पढ़ने और पढ़ाना सिखाने की होती है।

मालविका – और इसके साथ ही मैं प्रो. कृष्ण कुमार को धन्यवाद देना चाहूँगी कि जो कुछ भी हमने पढ़ने को लेकर आपसे बातचीत की है, हो सकता है कि वो कुछ प्रश्न भी उठाए और कई ऐसी चीज़ें करने के लिए हमें उत्साहित करे, जो शायद हम अपनी कक्षा में इसके ज़रिए कोई लाभ लाना चाहें। धन्यवाद!

पढ़ाई पहली कक्षा की

अक्षय कुमार दीक्षित*

जब मुझे पहली कक्षा के बच्चों को पढ़ाने का अवसर मिला तो मुझे विशेष प्रसन्नता का एहसास हुआ। वर्षों से मैं सरकारी स्कूलों के बच्चों को विभिन्न 'लेबलों' में बाँटे जाने की प्रवृत्ति का सामना करता रहा हूँ। "सरकारी स्कूलों में तो ऐसे ही बच्चे आते हैं", "इन्हें पढ़ना सिखाना तो लोहे के चने चबाना है", "साल भर इन्हें क ख ग घ ही आ जाए, यही गनीमत है" इस तरह के जुमले कई बार मैं सुन चुका था। मुझे पहली कक्षा को पढ़ाना इन्हीं मायनों में चुनौतीपूर्ण भी लगा।

मैंने सोचना-विचारना शुरू किया कि पहली कक्षा को पढ़ना-लिखना कैसे सिखाया जाना चाहिए। सदियों पुराना जाना-पहचाना रास्ता मेरे सामने था। मैंने भी शायद इसी तरीके से पढ़ना-लिखना सीखा था। पहले वर्णमाला, फिर बारहखड़ी, बिना मात्राओं वाले शब्द, मात्रा सहित शब्द, और ढेर सारा अभ्यास। पर मुझे एहसास था कि यह रास्ता बच्चों के लिए बहुत नीरस और कठिन रहेगा।

केवल पढ़ना-लिखना सिखा देना पहली कक्षा के शिक्षण का उद्देश्य नहीं हो सकता। पहली कक्षा तो बच्चे के स्कूली जीवन की बुनियाद है। यहीं से बच्चे स्कूली पढ़ाई तथा अनुभवों के बारे में अपनी पसंद या राय बनाते हैं। यदि कोई काम बच्चों की पसंद या उनके लिए महत्वपूर्ण नहीं है, तो वह निरर्थक है। बस, मुझे समझ में आ गया कि मुझे कैसे आगे बढ़ना है। मुझे वे गतिविधियाँ या काम सोचने या खोजने होंगे जो मेरे लिए ही नहीं, बच्चों के लिए भी आनंददायक तथा सार्थक हों, तभी बच्चों की जिज्ञासा को संतुष्ट किया जा सकेगा।

आखिर वह दिन आ पहुँचा जब मुझे पहली कक्षा के बच्चों से रू-ब-रू होने का सौभाग्य मिला। कुछ बच्चे उदासीन से लगे। कुछ उत्सुकता से मेरी ओर देख रहे थे। कुछ की आँखों में डर भी रहा होगा शायद। मैंने बच्चों से बातचीत शुरू की। अपना परिचय दिया, बच्चों से परिचय लिया। धीरे-धीरे बातचीत को उनकी पसंद/नापसंद की ओर मोड़ दिया। अवसर मिलते ही एक सवाल मैंने हवा में छोड़ दिया, "अच्छा ये तो बताओ, खाने में कौन-सा फल सबसे अच्छा लगता है?"

तुरंत जवाबों की रिमझिम होने लगी। “आम, केला, अमरूद, सेब,” आदि। कुछ ने हलवा, आइसक्रीम आदि का नाम भी लिया। जो बच्चे चुप थे, उनसे मैंने स्वयं पूछ लिया। आखिरकार यह बात उभरकर आई कि ‘आम’ सबसे अधिक बच्चों को अच्छा लगता है। मैंने सुझाव दिया, “चलो, आम का चित्र बनाते हैं।” जब मैंने श्यामपट्ट पर आम बनाने का प्रस्ताव रखा तो कुछ बच्चे तुरंत तैयार हो गए। श्यामपट्ट पर तरह-तरह के आम बन गए। फिर मैंने अगला सुझाव दागा, “जब आप सब आम बना लो, तो आम के नीचे उसका नाम भी लिख देना।”

“हमें तो लिखना नहीं आता,” एक-दो बच्चों ने बताया। “कोई बात नहीं। मैं बता देता हूँ”, यह कहकर मैंने श्यामपट्ट पर बने आमों के नीचे ‘आम’ लिखा और कहा कि श्यामपट्ट पर से देखकर आम का नाम लिखा जा सकता है। सभी बच्चों के चेहरों का तनाव गायब हो गया।

मेरा उद्देश्य केवल ‘आम’ शब्द लिखवाना नहीं था। इस कार्य से यह अपेक्षा बिल्कुल नहीं थी कि बच्चे बिल्कुल सुडौल अक्षरों में सही-सही ‘आम’ लिख देंगे। पर इसके पीछे मेरी मंशा यह थी कि बच्चों को इस बात का एहसास हो कि लिखे हुए शब्द का एक अर्थ होता है और बोले जाने वाले तथा लिखे जाने वाले ‘चित्र’ में कुछ संबंध होता है। जो शब्द या चित्र बच्चा पहली बार लिखे या बनाए, वह बच्चों की पसंद का हो, उनके लिए उसका अस्तित्व तथा महत्त्व हो।

जब बच्चे चित्र बनाकर मुझे दिखाने लगे, तो मैंने उनके सामने एक ‘जटिल’ समस्या रख दी।

“मुझे तुम्हारा नाम तो पता ही नहीं है। तुम जब अपना-अपना चित्र मुझे दिखाओगे, तो मुझे कैसे पता चलेगा कि यह किसका चित्र है? ऐसा करो, अपने चित्र के ऊपर अपना नाम भी लिख दो।”

दो-चार बच्चों को अपना नाम लिखना आता था, वे तुरंत खुश हो गए, उन्हें समस्या का बड़ा आसान हल मिल गया था। पर कुछ बच्चों ने कह दिया “मुझे अपना नाम लिखना नहीं आता।” जो बच्चे चुपचाप बैठे थे, संभवतः उन्हें भी अपना नाम लिखना नहीं आता था। मैंने तुरंत आश्वासन दिया, “कोई बात नहीं, जिन बच्चों को अपना नाम लिखना नहीं आता, उनके चित्र पर उनका नाम मैं लिख दूँगा, पर देखो, अगली बार मैं नाम नहीं लिखूँगा। अपना नाम याद कर लेना।”

इस तरह मैंने लगभग सभी बच्चों को उनके नाम लिखकर दे दिए। बच्चे खुश थे और एक-दूसरे को अपने-अपने चित्र और नाम दिखा रहे थे। मैंने उनके

सामने जो समस्या रखी थी, वह शायद बड़ों के लिए बहुत हलकी या छोटी समस्या हो - “मुझे कैसे पता चलेगा कि यह चित्र किसने बनाया है?” पर बच्चों के लिए यह एक गंभीर और वास्तविक समस्या थी। अतः उसका हल खोजने में उनकी दिलचस्पी भी गंभीर थी। इस बात के दो प्रमाण मुझे बाद में देखने को मिले। पहला, अगले दिन जब मैंने यही गतिविधि फिर करवाई तो मुझे केवल तीन-चार बच्चों के नाम उनके चित्र पर लिखने पड़े। अधिकतर बच्चों ने अपने नाम याद कर लिए थे। जिन बच्चों ने याद नहीं किए थे, उन्होंने पिछले चित्र से देखकर अपना नाम लिख लिया था अर्थात् उन्हें अपने नाम के अस्तित्व तथा उसे उचित रूप से इस्तेमाल करने की समझ थी।

दूसरा प्रमाण मुझे काफ़ी समय बाद तक मिलता रहा। कई बच्चे बाद में अनेक महीनों तक जब भी कुछ लिखते या चित्र बनाते, उस पर अपना नाम लिख देते ताकि मुझे पता चल जाए कि वह कार्य किसने किया है। अंत में मुझे कहना पड़ा “अब तो मुझे तुम सबके नाम याद हो गए हैं। अब तुम्हें हर बार अपना नाम लिखने की ज़रूरत नहीं है।”

इन सब गतिविधियों और समस्या-समाधानों के द्वारा अनेक उद्देश्य पूरे हुए परंतु सबसे बड़ा लाभ मुझे अगले चरण की गतिविधि में हुआ। उसमें इस बात की आवश्यकता थी कि प्रत्येक बच्चे को उसका नाम लिखना आता हो। मैंने उस गतिविधि का नाम रखा, “आज का राजा या रानी।” इस दौरान मैंने बच्चों को रोज़ कहानी सुनाना, नए-नए खेल खिलवाना भी जारी रखा। हर रोज़ बच्चे नए-नए शब्दों का इस्तेमाल करते, नए शब्द गढ़ते, खोजते और लिखते।

एक दिन मैंने एक मजेदार खेल खेलने का प्रस्ताव रखा। इस खेल का नाम बता दिया। हर बच्चे को एक-एक पर्ची दे दी गई। मैंने बताया, “इस पर्ची पर हर बच्चे को अपना-अपना नाम लिखना है।” नाम लिखने के बाद एक बच्चे ने सबकी पर्चियाँ एक थैली में इकट्ठी कर लीं। इसके बाद सबकी सहमति के बाद कक्षा की सबसे छोटी लड़की से एक पर्ची का चुनाव करवाया गया। मैंने पर्ची पर लिखा नाम पढ़ा और उसे “आज का राजा” घोषित कर दिया। श्यामपट्ट पर उसका नाम लिख दिया और पढ़ दिया। उस बच्चे को आमंत्रित किया गया और सबके सामने उसे कुर्सी पर बैठने को कहा गया। उसके सिर पर कागज़ का बना मुकुट भी रख दिया गया। मैंने सबको बताया, “सुमित जी आज हमारी कक्षा के राजा हैं। तुम सुमित जी से कोई भी सवाल पूछ सकते हो। शिकायत कर सकते

हो। सुमित जी उसका जवाब देंगे।” मैंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि यदि किसी सवाल का जवाब मालूम न हो तो राजा कह सकते हैं, “मुझे नहीं पता।”

सब बहुत उत्साहित थे। शुरू में तो राजा जी कुछ शर्माए पर बाद में बहुत तत्परता से सवालों के जवाब देने लगे। कुछ सवाल और शिकायतें मैंने भी कीं। बीच-बीच में श्यामपट्ट पर लिखे नाम की ओर भी मैं सबका ध्यान आकर्षित करता रहा। सबको बहुत मजा आया।

अब तो रोज़ कोई न कोई बच्चा “आज का राजा” या “रानी” बनता। मैं श्यामपट्ट पर उनके नाम लिखता। साथ-साथ पिछले “राजा” या “रानियों” के नाम भी लिखता। कुछ हफ्तों के बाद मैंने इस गतिविधि को कुछ विस्तार देने का प्रयास किया। मैंने कुछ ‘राजा-रानियों’ के नाम श्यामपट्ट पर लिख दिए जिनमें ‘स’ वर्ण स्वाभाविक रूप से आ रहा था। सुरेश, सुमित, संतोष, असलम, मानसी आदि मैंने उन सब नामों को पढ़ा। जिन बच्चों के नाम श्यामपट्ट पर लिखे थे, उन्हें आमंत्रित किया कि वे सब बच्चों को दिखाएँ कि उनका नाम कहाँ लिखा है। इसके बाद अन्य बच्चों को मौका दिया कि वे बताएँ कि उनके मित्र या सहेली का नाम कहाँ लिखा है। उद्देश्य यह था कि सब बच्चों को उनके या उनके मित्र के नामों की पहचान हो जाए।

इसके बाद मैंने उस ध्वनि की ओर बच्चों का ध्यान आकर्षित किया जो सभी नामों में मौजूद थी। मैंने शुरुआत इस तरह की थी। “कौन सी चीज़ इन सब नामों में एक जैसी है?” कई जवाब आए पर अंत में हम ‘स’ पर पहुँच ही गए। फिर मैंने ‘स’ से शुरू होने वाली व ‘स’ अक्षर वाली अन्य चीज़ों के नामों की ओर बच्चों का ध्यान आकर्षित करवाया और जैसे-जैसे वे नाम लेते गए, मैं श्यामपट्ट पर लिखता गया— पेंसिल, बस, सड़क, स्कूल, सब्जी और भी न जाने क्या-क्या।

मेरा उद्देश्य था सार्थक संदर्भों द्वारा बच्चों को उनके परिचित व्यक्तियों और वस्तुओं के नामों से परिचित करवाना। कुछ समय ध्वनियों की पहचान में भी लगाया। अब यह हमारा नियमित कार्यक्रम हो गया। कुछ ही समय में बच्चों का शब्द भंडार आश्चर्यजनक रूप से बढ़ गया। अनेक अक्षरों की पहचान और उनके सार्थक उपयोग की क्षमता भी लगभग सभी बच्चों में उपस्थित थी। इस कार्य में पाठ्यपुस्तक में मौजूद रोचक तथा बालसुलभ कविताओं ने मेरी बहुत मदद की। हम सब मिलकर कविताएँ गाते। मैं बच्चों से उनकी राय पूछता। जो कविता बच्चों को बहुत अच्छी लगती, बच्चे बार-बार उसे गाना चाहते। एक बार गा लेने भर

से उनका मन नहीं भरता, वे कह उठते “सर, एक बार और।” कुछ बच्चे कविता गाते-गाते अपने को रोक न पाते और खड़े होकर कविता के हिसाब से अभिनय तक करने लगते। कई बार मैं मजे-मजे में सुझाव देता, “मैं कविता की एक पंक्ति बोलूँगा, तुम दूसरी बोलना।” मैं बाद में क्रम उलट देता, “पहली पंक्ति तुम बोलो, दूसरी मैं बोलूँगा।” कभी-कभी बच्चे कविता की एक पंक्ति बोलते, मैं उनके पीछे-पीछे दोहराता। मैं आज भी यही करता हूँ। बच्चों को बहुत आनंद आता है जब उनके ‘सर’ उनके पीछे-पीछे कविता दोहराते हैं। कविता उन्हें स्वतः याद हो जाती है। यह सब कार्य उनके लिए सार्थक बन जाता है। उनके अंदर नया उत्साह तथा आत्मविश्वास जाग्रत हो जाता है कि वे बड़ों का ‘मार्गदर्शन’ करने में समर्थ हैं। इससे पता चलता है कि ज़रा-सी सूझ से किस प्रकार एक नीरस काम सरस बन जाता है। कविता अनेक बार गाने के बाद हम जब उसको “पढ़ते” तो यह काम लगभग सभी बच्चों के बाएँ हाथ का खेल बन चुका होता था। कई बच्चे स्वयं पुस्तक खोलकर अपने साथी को ‘पढ़ाते’ दिखाई पड़ते : “देख, यहाँ लिखी है यह कविता...” वे अँगुली रखकर अपने साथी को बताते। कई बार कुछ समझ न आने पर या भूल जाने पर पंक्ति को अपने मन से शब्द जोड़कर पूरा कर देते, ठीक उसी तरह जिस तरह हम कोई गाना भूल जाने पर अपने मन से शब्द जोड़कर गाना पूरा कर लेते हैं। मैंने गौर किया, यह बदलाव हमेशा ठीक-ठीक या सटीक होता। उदाहरण के लिए, एक बार एक बच्चा अपने साथी को कविता दिखा रहा था,

“पत्ता बोले खड़-खड़-खड़।

कहें पटाखे भड़-भड़-भड़।

छुर-छुर-छुर बोलें - फुलझड़ियाँ।

रॉकेट बोले - तड़-तड़-तड़।

बच्चे ने पूरी कविता अपने आप-अपने साथी को पढ़कर बताई और फुलझड़ियाँ की जगह “छुरछुरियाँ” बदल दिया। स्वाभाविक-सी बात है कि उसके परिवेश या घर में फुलझड़ी को छुरछुरी बोलते होंगे। मैं चुपचाप यह सब देख रहा था। मैंने उसे टोकने या ‘ठीक करने’ की ज़रूरत महसूस ही नहीं की क्योंकि उसने कोई गलती की ही नहीं थी। बल्कि मुझे अवसर मिला एक नया शब्द और संदर्भ अगली गतिविधि के लिए। हमने अगली गतिविधि में “छुरछुरी” शब्द के बारे में ही बातचीत की।

पढ़ने का आकलन कैसे करें

शारदा कुमारी*

दुनिया के किसी भी कोने में रहने वाले किसी भी उम्र के व्यक्ति के पास अगर कोई सबसे रोमांचकारी और अनोखी चीज़ है तो वह है 'पढ़ने' का कौशल। यह वह तिलस्मी दरवाज़ा है जिसे खोल कभी हम परी लोक हो आते हैं, न जाने कितने किस्से-कहानियों का मज़ा लूटते हैं तो कभी ज्ञान की अतुल अपार संपदा समेटे रहस्यमयी दुनिया की सैर कर आते हैं, और तो और इतिहास बन चुके नज़ारों से भी रू-ब-रू हो लेते हैं। स्कूली दुनिया में तो इस करिश्मे के बिना किसी की कोई बिसात ही नहीं। गणित हो या विज्ञान या फिर भाषा सभी विषयों की नैया का खेवनहार 'पढ़ना' ही है। पर किस तरह से पढ़ना? ज़रा नीचे लिखे पर गौर फरमाएँ:

- बच्चे को हर अक्षर की पहचान बहुत अच्छे से है। वे अक्षरों को जोड़-जोड़ कर शब्द पढ़ पा रहे हैं। क्या इसी तरह का 'पढ़ना' उन्हें किस्से-कहानियों की दुनिया में ले जाएगा?
- बच्चे लिखित या मुद्रित सामग्री के एक-एक शब्द को पढ़कर आगे बढ़ रहे हैं। क्या इसी तरह से 'पढ़ना' उन्हें उस सामग्री से रोमांचित होने के मौके दे जाएगा?
- बच्चे केवल वही सामग्री पढ़ पा रहे हैं जिसे शिक्षक या अभिभावक द्वारा बच्चे के सम्मुख कई बार पढ़ा गया है। ज़ाहिर सी बात है पाठ्यपुस्तक के पाठ ही होंगे और वह भी भाषा की पुस्तक के, पर जब पाठ्यपुस्तक से इतर कोई पठन सामग्री उनके सामने आती है, वे उसका आनंद नहीं उठा पाते। क्या हम इसी तरह के 'पढ़ने' की बात कर रहे थे। निश्चित रूप से नहीं।

हम 'पढ़ने' को करिश्माई कौशल तभी मान सकेंगे, जब हम लिखे हुए में से अर्थ ढूँढ़ सकें।

शब्दों, अक्षरों की पहचान मात्र 'पढ़ना' नहीं है। बहुत से बच्चे गणित के तमाम जटिल से जटिल सवाल चुटकियों में हल कर लेते हैं बशर्ते सवाल की

*वरिष्ठ प्रवक्ता, डाइट, सेक्टर 7, आर.के.पुरम, नई दिल्ली

इबारत ज़बानी बोली जाए या सिर्फ़ संख्याएँ दे दी जाएँ। वे अपने इर्द-गिर्द हो रही हर घटना की जानकारी रखते हैं, अपने बड़ों को उन घटनाओं से अवगत करवाते रहते हैं। पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, चाँद-सूरज, दिन-रात आदि से जुड़ी उनके पास अपनी जानकारीयों का खज़ाना है, जिसे उन्होंने अपनी अद्भुत अवलोकन क्षमता से हासिल किया है पर विज्ञान की पुस्तक में लिखे खज़ाने से वे कुछ भी नहीं ले पाते। दोनों जगह उन्हें एक ही चीज़ मात दे रही है वह है 'ठीक से न पढ़ पाना'। यह 'ठीक से न पढ़ पाना' सिर्फ़ भाषा की घंटी से ही सरोकार नहीं रखता अपितु समूची विद्यालयी गतिविधियों जैसे- दूसरे विषयों की पढ़ाई, बुलेटिन बोर्ड तैयार करना, परियोजना कार्यों की रिपोर्ट तैयार करने के लिए सामग्री का चयन करना, यह सब 'पढ़ना आने' पर ही निर्भर करता है। और अब तो ऐसा दौर आ गया है कि विद्यालय से बाहर की दुनिया को समझने के लिए भी 'पढ़ना आना' ज़रूरी है। इस 'पढ़ने' का आकलन कैसे किया जाए अभी असल बात हमें इसी पर करनी है। हम सभी जानते हैं कि 'पढ़ना' भाषा का अर्जित किया जाने वाला कौशल (Acquired skill) है। इस आधार पर यह तथ्य उभर कर सामने आता है कि 'पठन कौशल' यानी कि 'पढ़ने' का आकलन करने के लिए समझना बहुत ज़रूरी है कि यह कौशल अर्जित कैसे किया जा रहा है, अर्थात् बच्चे किस तरह से 'पढ़ना' सीख रहे हैं। 'पढ़ना सीखने' के प्रति समझ बनना इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि 'पढ़ना सीखना' और उसका 'आकलन करना' ये अलग-थलग घटने वाली प्रक्रियाएँ नहीं हैं बल्कि दोनों ही साथ-साथ चलने वाली प्रक्रियाएँ हैं। इस संदर्भ में कुछ और भी बिंदु हैं जिन पर ध्यान देना ज़रूरी होगा जैसे -

- आकलन सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का हिस्सा है। यह एक सतत् प्रक्रिया है।
- आकलन से तात्पर्य है तरह-तरह की पद्धतियों का इस्तेमाल करते हुए बच्चों के सीखने की प्रगति संबंधी सूचनाएँ हासिल करते रहना और उस आधार पर उन्हें रचनात्मक पृष्ठपोषण देना।
- आकलन सिर्फ़ इसलिए नहीं किया जाता कि हम पता लगाएँ कि बच्चों ने क्या और कितना सीखा है बल्कि 'कैसे' सीख रहे हैं, इसे भी समझा जाता है। उनकी सफलताओं या कठिनाइयों और आत्मविश्वास के स्तर को पहचानना भी ज़रूरी होता है।
- आकलन बच्चों की ज़रूरतों, रुचियों और पूर्व अनुभवों का पता लगाने के लिए भी किया जाता है। वे पहले से क्या जानते हैं और क्या कर सकते हैं, आकलन की प्रक्रिया हमें यह जानने में भी मदद करती है।

- भाषा के उद्देश्यों और लक्ष्यों के संदर्भ में गतिविधियों और पद्धतियों की प्रभावशीलता मापने तथा अपनी अध्यापन पद्धतियों को परखने में भी आकलन मदद करता है।
- अंततः आकलन द्वारा बच्चे के सीखने की गुणवत्ता सुनिश्चित करना भी अनिवार्य है।
- आकलन संबंधी पद्धतियाँ एवं दृष्टिकोण चुनौतीपूर्ण बच्चों की जरूरतों का भी खयाल रखने वाला हो और निश्चित रूप से पूर्वाग्रहों से दूर हो।
- एक बात और आकलन चाहे पढ़ने की क्षमता का हो या फिर किसी अन्य कौशल का, आकलन करना अकेले शिक्षक/अध्यापक की बपौती नहीं, इस प्रक्रिया में सामुदायिक सहभागिता भी जरूरी है। 'स्व' और 'साथी आकलन' के लिए भी तमाम गुँजाइशें हैं। उपर्युक्त बिंदुओं के प्रति समझ और सहमति बनने के बाद अगले पायदान पर चढ़ने से पहले एक छोटा-सा पड़ाव और पड़ता है, वह है भाषायी कौशलों के संदर्भ में 'पठन कौशल के उद्देश्य'। जब तक हमें यह ही नहीं पता कि प्राथमिक स्तर पर 'पढ़ने' से जुड़े क्या-क्या उद्देश्य हैं तो हम आकलन किस आधार पर करेंगे? इसलिए हम उद्देश्यों पर भी निगाह डाल लेते हैं-
- परिवेश में उपलब्ध संदर्भों, चित्रों एवं अन्य मुद्रित/लिखी सामग्री से परिचित होना और अनुमान से पढ़ने का प्रयास करना।
- 'पढ़ने' को दैनिक जीवन की जरूरतों से जोड़ना, घर और बाहर दोनों ही।
- लिपि चिह्नों को देखकर और उनकी ध्वनियाँ सुन और समझकर उनमें सहसंबंध बनाते हुए पढ़ने की कोशिश करना।
- सुनी हुई कहानियों, कविताओं को लिखित/मुद्रित रूप में देखने पर उनसे अपने अनुभव जोड़ पाना।
- विषय सामग्री के माध्यम से नए शब्दों का अर्थ जानने की कोशिश करना।
- मुख्य बिंदु/विचार को ढूँढ़ने के लिए विषय सामग्री की बारीकी से जाँच करना।
- पाठ्यपुस्तक की विधाओं से परिचित होना और उन विधाओं की दूसरी पुस्तकें/रचनाएँ पढ़ने के लिए प्रोत्साहित होना।
- दूसरों के विचारों को पढ़कर समझने की योग्यता का विकास करना।
- पुस्तकों के प्रति रुचि जाग्रत करना/पढ़ने के प्रति एक ललक पैदा करना।

पढ़ने का आकलन कैसे करें

- पठन के द्वारा ज्ञानार्जन एवं आनंद प्राप्ति में समर्थ बनाना।

निश्चित रूप से इन उद्देश्यों के साथ कक्षा में विराजी भाषायी सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता के प्रति सहिष्णुता होना तो शामिल है ही। अब बात करते हैं कि आकलन कैसे करें? मान लीजिए कि हमने बच्चों के सामने एक चित्र प्रस्तुत किया। चित्र में एक बस है। उस बस से कुछ दूरी पर बच्चे हैं। उनकी मुद्रा दौड़ने की सी है और बस पर चढ़ने की है।

चित्र के साथ मोटे अक्षरों में लिखा है - “बच्चे दौड़कर बस में चढ़ गए।” जिन बच्चों के सामने हमने चित्र प्रस्तुत किया उन्हें लिपि चिह्नों, अक्षरों, शब्दों, वर्णों की पहचान है यानी कि आम भाषा में कहें तो वे ‘पढ़ना’ जानते हैं। हमने इन बच्चों से कहा कि चित्र देखें और लिखा हुआ वाक्य पढ़कर बताएँ। कुछ बच्चे पढ़ते हैं - “बच्चे दौड़कर बस पर चढ़ गए।” कुछ बच्चों ने वाक्य को इस तरह से पढ़ा- “ब-च्-चे द औ की मात्रा ड़, दौड़ कर ब-स म ए की मात्रा में, च-ढ़ ग-ए।”

कुछ बच्चों ने वाक्य को इस तरह से पढ़ा- “बच्चे द ड़ क र ब स में चढ़ ग ए ।” कुछ बच्चों ने वाक्य को इस तरह से पढ़ा- “बच्चे भागकर बस में चढ़ गए।” यहाँ पर ‘पढ़ने’ की चार बानगियाँ प्रस्तुत हैं।

- पहली बानगी में बच्चों ने ‘में’ की जगह ‘पर’ बोला है या ऐसे भी कह सकते हैं पढ़ा है।
- दूसरे से साफ़ जाहिर है कि बच्चे हर अक्षर को अलग-अलग पढ़ रहे हैं यानी कि तोड़-तोड़ कर पढ़ रहे हैं और निश्चित रूप से उनका आपस में कोई संबंध नहीं जोड़ पा रहे हैं।
- तीसरी शैली से पता चलता है कि वाक्य के कुछ शब्द तो सही-तरीके से पढ़ लिए गए हैं पर ‘दौड़’ में औ की मात्रा एक व्यवधान बन गई और उसे ‘द ड़’ पढ़ा गया।
- चौथे में तो ‘दौड़ कर’ उड़ा ही दिया गया और पढ़ा गया ‘भागकर’। आपको क्या लगता है- यह शब्द ‘भागकर’ कहाँ से आया होगा? निश्चित रूप से उस सामग्री में तो कहीं भी नहीं लिखा या छपा जो उन्हें पढ़ने के लिए दी गई है। उस पर सिर्फ़ एक ही वाक्य लिखा है - “बच्चे दौड़कर बस में चढ़ गए।” और साथ में एक चित्र है जिसमें बस है और दौड़कर बस पकड़ते बच्चे।

अब यदि आपके पास पाँच बिंदुओं वाली मापनी है-

1. बहुत मदद चाहिए।
2. मदद चाहिए।
3. औसत
4. उत्तम/अच्छा
5. उत्कृष्ट

और 'पढ़ने' के संदर्भ में आपकी परिभाषा है- "लिखे हुए से अर्थ ग्रहण करना।" तो आप चारों में किसको किस श्रेणी में रखेंगे?

आपका उत्तर 'पढ़ने' का आकलन करने की दिशा तय करेगा।

अब 'पढ़ने का आकलन' से जुड़ी कुछ गतिविधियाँ प्रस्तुत हैं जो यह समझ बनाने में सहायता करेंगी कि 'पढ़ने' का आकलन कैसे करें, किस तकनीक का इस्तेमाल करें, सूचनाएँ दर्ज कैसे की जाएँ और पृष्ठपोषण किसे और कैसे दिया जाए। पहले चित्र पढ़ने की बात करते हैं।

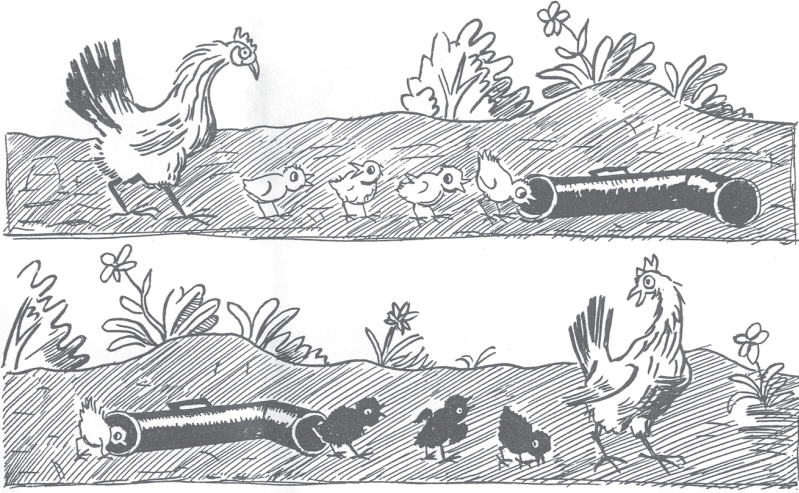
पूर्व तैयारी - हमारे पास बच्चों को दिखाने के लिए चित्र है। (क) चित्र का आकार इतना तो जरूर है कि बच्चे ध्यान से देख सकें, पढ़ सकें, अनुमान लगा सकें। संभवतया उस चित्र की 6-7 प्रतिलिपियाँ हैं और पाँच-पाँच (स्थिति के अनुसार) के समूह बनाकर चित्र का अवलोकन करने के लिए भी दिया जा सकता है।

ख) चित्र का चयन बच्चों के पूर्व अनुभवों, स्थानीय सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों के अनुसार ही किया गया है।

- हमारे पास एक रजिस्टर है जिसमें सभी बच्चों के नाम लिखे हैं और हम उसमें हर बच्चे के संबंध में विवरणात्मक टिप्पणियाँ लिखने के लिए मानसिक रूप से तैयार हैं।

भरी हुई कक्षाओं (एक कक्षा में अधिक संख्या में बच्चे होना) के साथ निर्वाह करने वाले शिक्षक भी इस तैयारी का हिस्सा हो सकते हैं। जरूरी नहीं कि साठ-सत्तर सभी बच्चों का अवलोकन और टीपें दर्ज होना 'आज एक ही दिन' में किया जाए। आज समूह-1 के सात बच्चे तो कल समूह-2 के। इस तरह 15 दिन में हर बच्चे के कौशल का स्तर हमारी मापनी पर अंकित हो सकता है। पूर्व तैयारी में ही शामिल होगा चित्र संबंधी प्रश्नों का निर्माण। ऐसे प्रश्न जो ये पता लगा सकें कि बच्चे चित्र को पढ़ पा रहे हैं या नहीं।

पढ़ने का आकलन कैसे करें



प्रस्तुत चित्र के संबंध में प्रश्न हो सकते हैं-

1. इस चित्र में क्या-क्या चीजें दिखाई दे रही हैं?
2. आगे-आगे कौन चल रहा है?
3. चूजों के पीछे कौन चल रहा है?
4. सभी चूजों के अपनी पसंद से नाम रखो।
5. उनकी माँ मुर्गी का भी नाम रखो।
6. चूजे उस पाइप के अंदर से क्यों जाना चाहते हैं?
7. माँ उन्हें मना करे या नहीं?
8. जब चूजे पाइप के रास्ते बाहर आए तो उनकी माँ हैरान क्यों हुई?
9. कितने चूजे पहले बाहर निकले। कितने चूजे पीछे रह गए।
10. यह चूजा पीछे क्यों रह गया होगा?
11. पाइप के अंदर क्या चीज़ हो सकती है, जिससे चूजों का रंग बदल गया?
12. इसे देखकर कोई कहानी सूझती होगी, सुनाओ?
13. पहले क्या हुआ, फिर क्या हुआ?
14. अब चूजे क्या करेंगे?
15. इनकी माँ इन्हें क्या कहेगी?

16. इस चित्र को कोई नाम दे सकते हो?
17. इससे मिलता-जुलता कोई चित्र पहले भी देखा था?
18. अगर बच्चे पाइप के अंदर ही फँस जाते तो?
19. ये पाइप रास्ते में किसने रखा होगा?
20. तुम्हारे घर के आस-पास भी ऐसे ही चीजें पड़ी होती हैं क्या?
21. तुम इस मुर्गी और चूज़ों से कोई सवाल करना चाहोगे, कोई भी सवाल इनसे पूछो। निश्चित रूप से इतने सवाल नहीं पूछे जाएँगे। ये केवल उदाहरण के लिए हैं कि कल्पना को विस्तार देने वाले, अनुमान लगाने वाले, विश्लेषण करने का मौका देने वाले और तार्किक क्षमता का विकास करने में मदद देने वाले ही सवाल पूछना बेहतर होगा। मात्र कौन हैं? कितने हैं? क्या-क्या है? जैसे प्रश्न पूरी तरह से चित्र पढ़ने में मदद नहीं करते।

अब तक हमने क्या किया? तसवीर का चयन, संबंधित प्रश्नों का निर्माण, एकल या समूह में बच्चों को चित्र दिया गया और अब प्रश्न पूछने की बारी है और टीपें दर्ज करने का समय। (इस समय टीपें रजिस्टर में नहीं हमारे मस्तिष्क/स्मृति में दर्ज हो रही हैं। सवाल-जवाब करते समय रजिस्टर में टिप्पणियाँ लिखना बच्चों को व्याकुल कर सकता है। उनकी सहजता के आड़े आ सकता है।) यहाँ हमें एक बहुत ही अहम बात ध्यान में रखनी होगी-

“सभी बच्चे अपने-आप में अद्वितीय हैं। उनके सीखने-समझने की गति भिन्न-भिन्न है।” निश्चित रूप से इशारा बच्चों को दिए गए समय से है।

एक बहुत ही सहज से माहौल में बच्चों से प्रश्न पूछे गए। उत्तर पाने में शीघ्रता का भाव नहीं दिखाया गया। सवाल की भाषा सरल थी। ज़रूरत पड़ने पर सवाल दोहराया भी गया। बच्चों के उत्तर स्वीकार किए गए। जिस बच्चे ने जवाब देने में झिझक/कठिनाई प्रदर्शित की, उसे विवश नहीं किया गया बल्कि कहा गया-“चलो, कोई बात नहीं। बाद में बता देना।”

एक बार में पाँच बच्चों के पढ़ने के बारे में ही याद रह पाया। उनकी टिप्पणियाँ कैसी होंगी, नमूना प्रस्तुत है-

1. अनुश्री - उत्कृष्ट

पिछली बार की तुलना में कहीं अधिक सहज और सजग है। चित्र देखते हुए मुस्कुरा रही थी और अंत में तो हँस ही पड़ी। फटाफट बच्चों के नाम रख दिए

पढ़ने का आकलन कैसे करें

पर मुर्गी का नाम नहीं रखा यह कहकर कि यह तो 'मम्मी' है। मम्मी का नाम नहीं होता। (घर पर कभी मम्मी का नाम लिया जाता होगा।)

पूछे गए प्रश्नों की जगह अपने ही प्रश्न बना डाले और उनके उत्तर भी दे दिए। जैसे- चारों चूजे आपस में क्या कह रहे हैं? ये एक लाइन में क्यों चल रहे हैं? ये आपस में कब-कब लड़ते होंगे?

2. शांतनु - मदद की ज़रूरत है

चित्र को देखने में कुछ अधिक समय लिया। क्या है? कितने हैं? कौन हैं? के उत्तर फटाफट दे दिए। पिछली बार से तुलना करें तो कोई विशेष प्रगति नहीं है। "मुर्गी कैसी है" का वर्णन अच्छे से किया पर अनुमान वाली बात में हिचकिचाहट थी। सवालियों का जवाब एक या दो शब्दों में ही दे पा रहा था। बिना उतार-चढ़ाव के पाँच वाक्यों की कहानी सुनाई।

3. आयुष - औसत

पिछली बार की तुलना में इस बार अधिक ऊर्जावान और प्रफुल्लित नज़र आ रहा है। उत्तर देने के लिए तत्पर है। घटनाक्रम बहुत सहजता से बता पाया है परंतु कल्पना तथा अनुमान लगाने वाले सवालियों का उत्तर देने में हिचकिचाहट थी। प्रोत्साहित करने पर एक दो वाक्य रुक-रुक कर कह पाया है।

इसी तरह से बाकी बच्चों के संबंध में भी टीपें दर्ज की गईं।

'पठन कौशल' के आकलन के संदर्भ में अभी हमने 'चित्र पढ़ने' का आकलन किया था। चित्र के बाद छोटी-छोटी कविताओं, कहानियों और पाँच-छह वाक्यों वाले रुचिकर अनुच्छेदों को पढ़ने की बात आती है। धीरे-धीरे स्तर बढ़ता जाएगा और हम बच्चे को भिन्न-भिन्न विधाओं के पठन की ओर ले जाएँगे। यहाँ पर आकलन के लिए हमें कुछ संकेतकों को ध्यान में रखना होगा। पठन संबंधी मुख्य संकेतक इस प्रकार हो सकते हैं-

1. आनंद लेते हुए कविता को पढ़ना।
2. आवश्यकतानुसार शब्दों पर बल देना।
3. पढ़ी गई कविता को अनुमान से आगे बढ़ाना।
4. कविता-कहानी का अर्थ समझते हुए पढ़ पाना।
5. कविता या कहानी के घटना-क्रम को अपनी कल्पना से आगे बढ़ाना और आगे-पीछे होने वाली घटनाओं में अंतर कर पाना।

6. पढ़ी जा रही सामग्री में आए अपरिचित शब्दों का संदर्भ के आधार पर मतलब ढूँढ़ना।
7. पढ़ी गई सामग्री को अपनी तरह से प्रस्तुत कर पाना।
8. परिवेश में उपलब्ध पठन सामग्री जैसे पोस्टर, विज्ञापन बोर्ड, सड़क संकेतों, स्कूल, सड़क, दुकानों के नाम, स्कूल में लिखी इबारतों आदि को पढ़ पाना और उनके प्रति समझ बनाना।
9. आवश्यक सूचनाओं और संदेशों को समझकर पढ़ पाना।
10. चित्रों को लिखित सामग्री से जोड़ते हुए घटनाओं के बारे में अनुमान लगाना। और अपने अनुमान के लिए तर्क भी सुझाना।
11. पोस्टर, विज्ञापन, साइन बोर्डों से अब पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने की तरफ प्रोत्साहित होना।
12. पाठ्यपुस्तकों से इतर अपनी पसंद की पुस्तकों, चित्रकथाओं, कॉमिक्स आदि पढ़ना और उन्हें पढ़ने के लिए ललक पैदा होना।
13. नए तथा अपरिचित शब्दों के अर्थ ढूँढ़ने के लिए सिर्फ अनुमानों पर या फिर बड़ों की मदद पर ही निर्भर नहीं रहते अपितु शब्दकोश की सहायता भी लेते हैं।
14. भिन्न-भिन्न विधाओं को पढ़ने में रुचि दिखाना और किसी खास विधा के प्रति आकर्षण प्रदर्शित करना।
15. तरह-तरह की पठन सामग्री का संकलन करना और उन्हें पढ़ने के लिए लालायित रहना।

इन सभी संकेतकों के आधार पर बच्चों के पठन कौशल एवं क्षमता का आकलन किया जा सकता है। यद्यपि ये सभी संकेतक एक बढ़ते हुए क्रम में हैं पर यह दावा नहीं किया जा सकता कि सभी बच्चे क्रमानुसार ही इन्हें प्रदर्शित करेंगे। हो सकता है कोई बच्ची अभी पूरी तरह से पढ़ना नहीं सीख पाई है, पर वह तरह-तरह की पठन सामग्री का संकलन करने में रुचि रखती हो और अनुमान के आधार पर उन्हें पढ़ती हो। यह भी हो सकता है कि किसी बच्चे ने अभी प्रवाह के साथ पढ़ना नहीं सीखा पर घर में या विद्यालय में देखकर शब्दकोश के प्रति रुचि जाग्रत हो आई हो और उसका इस्तेमाल करना शुरू कर दिया हो। उपर्युक्त संकेतकों को आधार बनाकर तरह-तरह की विधियों के माध्यम

से जिनमें अवलोकन सर्वोपरि है, बच्चों के पढ़ने की प्रगति से जुड़ी सूचनाएँ और प्रमाण संग्रहित किए जा सकते हैं। ध्यान यह रखना है कि इन सूचनाओं के आधार पर हम प्रत्येक बच्चे की प्रगति की तुलना उसकी अपनी पिछली स्थिति से करेंगे, दूसरे बच्चों की प्रगति से नहीं। इनका इस्तेमाल बच्चों के अधिगम और निष्पादन को उन्नत करने के लिए करेंगे न कि निर्णयात्मक टिप्पणी देने के लिए कि अमुक बच्ची पढ़ने में तेज है और अमुक कमजोर या असफल। ये सूचनाएँ हमें अपनी शिक्षण विधियों, सिखाने-सीखने की प्रक्रियाओं को उन्नत करने में भी मददगार होंगी। इन सूचनाओं को दूसरे साथी शिक्षकों तथा अभिभावकों से साँझा करना भी ज़रूरी होगा। आकलन संबंधी पृष्ठपोषण बच्चों को भी देना बहुत ज़रूरी है। बच्चों को यह आभास होता रहे कि अधिगम प्रक्रिया के कौन-से हिस्से पर वे अभी हैं और किन क्षेत्रों में अधिक ध्यान देने की ज़रूरत है।

‘पढ़ने’ का आकलन करने से जुड़े बहुत से मुद्दों की बात की गई। चलते-चलते एक और बात। वह यह कि पठन कौशल को अगर वास्तव में ‘निपुणता’ के स्तर पर लाना है तो पढ़ने का माहौल तो बनाना ही होगा। कक्षा में, कक्षा के बाहर, यहाँ तक कि अभिभावकों से संवाद स्थापित कर उनके घर में भी अपेक्षित माहौल बनाया जा सकता है। यह माहौल बनेगा रुचिकर पठन सामग्री की उपलब्धता से। आपने ज़रूर गौर किया होगा कि उन बच्चों पर जिन्होंने अभी-अभी पढ़ना सीखा है, कोई भी कागज़ उनके हाथ लगता है जिस पर कुछ लिखा या छपा हो चाहे वह कोई लिफाफा हो या चने-मूँगफली को लपेटे कोई पुराना सा कागज़, वे उसे उलट-पुलट कर पढ़ते ज़रूर हैं। सड़कों के किनारे लगे इश्टिहारों पर भी उनकी नज़रें घूमती रहती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि वे पढ़ने के लिए उत्सुक हैं। इस उत्सुकता को बरकरार रखना या खत्म कर देना, दोनों बहुत कुछ हमारे हाथ में है।

क्रमिक पुस्तकमाला-बरखा

लतिका गुप्ता*

पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों के लिए

क्रमिक पुस्तकमाला**

पहली कक्षा में प्रवेश लेते समय बच्चे अपनी भाषा के बहुत सारे शब्दों के अर्थ जानते हैं। वे चीजों को उनके संदर्भ में यानि उनके व्यावहारिक रूप में पहचानते हैं और अपने घर में बोली जा रही भाषा की वाक्य संरचना को भी जानते हैं। स्कूल को यह ठोस भाषायी नींव हरेक बच्चे में तैयार मिलती है। यदि स्कूल इस नींव को आधार बनाकर चले तो सभी बच्चों को चंद महीनों में ही पढ़ना-लिखना सिखाया जा सकता है लेकिन प्रायः ऐसा होता नहीं है। हम सभी इस सच्चाई से वाकिफ़ हैं कि हमारे स्कूलों में आने वाले अधिकतर बच्चे पाठक नहीं बन पाते। पाँचवीं तक आकर भी बहुत सारे बच्चे अक्षर पहचानने पर ही अटके रहते हैं और जो पढ़ना सीख भी लेते हैं, वे सही मायनों में सफल पाठक नहीं बन पाते। पाठक न बन पाने से हमारा आशय है कि बच्चों में पढ़ने की आदत और पढ़ने से मिलने वाली खुशी की लालसा पनप ही नहीं पाती।

स्कूलों की इस निरंतर चल रही गहरी असफलता को हमें अब रोकना है और इसे हम रोक सकते हैं। अगर हम पढ़ना सिखाते समय बच्चों के उस ज्ञान और अनुभव को कक्षा में स्थान दें जिसका जिक्र ऊपर किया गया है। ऐसा करने से वे उसी सहजता से पढ़ना सीख जाएँगे, जिस सहजता से वे घर में बोलना सीख चुके होते हैं। स्कूल के शुरुआती कुछ महीनों में ही हरेक बच्चा समझ के साथ पढ़ना सीख सकता है। जरूरत है, स्कूल के प्रयासों में गहनता लाने की और बच्चों को पढ़ना सिखाने की अक्षर पद्धति से आज्ञाद होकर एक नए सिरे से सोचने की। इस दिशा में एन.सी.ई.आर.टी. ने एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है। बच्चों की पढ़ना सीखने की नैसर्गिक क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए बरखा क्रमिक पुस्तकमाला तैयार की गई है। इस पुस्तकमाला का आधारभूत विचार है कि यदि बच्चे शुरू से ही समझ और मजे के साथ पढ़ें तो वे बहुत जल्दी पढ़ना सीख जाएँगे और सफल पाठक बन जाएँगे। क्रमिक पुस्तकमाला एक शिक्षाशास्त्रीय

* परामर्शदाता, रीडिंग डेवलपमेंट सैल, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली-16

** पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों के लिए एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा क्रमिक पुस्तकमाला-बरखा प्रकाशित की गई है।

संसाधन है जिससे पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों को पढ़ना सीखने में मदद मिलेगी और उनमें ज्यादा से ज्यादा पढ़ने की ललक जगेगी।

बच्चे पढ़ना कैसे सीखते हैं?

पढ़ने की प्रक्रिया में अनुमान लगाने की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पढ़ना सीख रहे बच्चों को शुरू से ही पाठ्यसामग्री में अनुमान लगाकर पढ़ने के अवसर मिलने चाहिए। आमतौर पर ऐसा होता नहीं है। हमारी शिक्षा व्यवस्था में शुरुआती कक्षाओं में बच्चों को सिर्फ अक्षरों को ध्वनियों से जोड़ना सिखाया जाता है। यह मान लिया जाता है कि अक्षरों और ध्वनियों का संबंध बिठाते-बिठाते बच्चे धीरे-धीरे पढ़ने लगेंगे। इस तरीके से बच्चे अक्षर जोड़ते हुए पढ़ना सीख जाएँ तो भी वे पाठक नहीं बन पाते हैं। पढ़ी हुई सामग्री को समझकर, उस पर अपनी राय बना पाना तो बहुत दूर की बात है। इसका एक कारण यह है कि हम पढ़ते समय अनुमान लगाने का प्रशिक्षण देने पर कभी ध्यान ही नहीं देते। बल्कि यदि बच्चा अनुमान लगाकर पढ़ने का प्रयास करता है और उसमें कोई गलती करता है तो उसे टोक दिया जाता है।

बरखा के तहत यह प्रयास किया गया है कि बच्चों को इस पुस्तकमाला की कहानियों को पढ़ते समय पाठ्यसामग्री के बारे में अनुमान लगाने के भरपूर मौके मिलें। बच्चे अनुमान लगाते समय अपने अनुभवों, व्यावहारिक ज्ञान और भाषा के मौखिक रूप की जानकारी को उपयोग में ला पाएँगे। इसलिए सारी कहानियाँ बच्चों के दैनिक अनुभवों के आधार पर ही रची गई हैं। पढ़ने के कौशल का बच्चों के संज्ञानात्मक विकास में महत्वपूर्ण योगदान होता है। बच्चों को जब स्वयं पढ़ने के लिए प्रचुर मात्रा में किताबें मिलेंगी तो न केवल उनकी पढ़ने की क्षमता विकसित होगी, बल्कि स्कूली ज्ञान के हरेक क्षेत्र में उनको लाभ मिलेगा।

बरखा की कहानियों का स्वरूप

बरखा में चालीस कहानियाँ हैं जो पाँच कथावस्तुओं और चार स्तरों में विभाजित हैं। स्तरानुसार कहानियों में वाक्यों की संख्या एवं कथानकों की गूढ़ता बढ़ती जाती है। प्रत्येक कथावस्तु में दो मुख्य पात्र हैं जिनके द्वारा कहानियाँ प्रस्तुत की गई हैं। जमाल और मदन पड़ोस में रहने वाले दोस्त हैं जो खाने की चीजों में बहुत रुचि लेते हैं। इसी तरह रमा और रानी दो बहनें हैं जिनके दैनिक जीवन पर आधारित कहानियों में यह बिंदु उभरता है कि बच्चे अपने आस-पास मौजूद हरेक चीज़ और इन्सान से बराबर का रिश्ता महसूस करते हैं और उनसे जुड़ी हर

छोटी-से-छोटी बात पर ध्यान देते हैं। काजल और माधव भाई-बहन हैं जिनके दृष्टिकोण से हम बच्चों के उस सुख को महसूस कर सकते हैं जो उन्हें जानवरों और पक्षियों को देखकर तथा उनके साथ रहकर मिलता है। जीत और बबली के द्वारा बच्चों के विभिन्न तरह के खेल और उनसे जुड़ी हुई मजेदार तरकीबों के बारे में पता चलता है। तोसिया और मिली दो सहेलियाँ हैं जो किसी भी सामान्य लड़की की तरह अपने आस-पास की हर चीज़ के बारे में जानना चाहती हैं और उसके टूटने या बिगड़ने की चिंता न करके उसमें खेल के मौके ढूँढ़ लेती हैं।

बरखा की कहानियों के चार स्तर हैं। वाक्य संरचना, शब्दों की संख्या, उपकथानकों की संख्या और गहनता के आधार पर इन कहानियों का स्तर निर्धारित किया गया है। जैसे-जैसे स्तर बढ़ता है, वाक्यों एवं कहानी के उपकथानकों की संख्या बढ़ती जाती है।

पहला स्तर — इस स्तर पर दस कहानियाँ हैं। हरेक कथानक की दो-दो कहानियाँ हैं। कहानियों में प्रत्येक पृष्ठ पर एक चित्र और वाक्य दिया गया है। पूरी कहानी में सिर्फ़ एक घटना या समस्या उभरती है। वाक्य संरचना में काफ़ी दोहराव है जिससे बच्चों को पढ़ने में मदद मिलती है।

दूसरा स्तर — इस स्तर पर दस कहानियाँ हैं। इसमें भी हरेक कथानक की दो-दो कहानियाँ हैं। कहानियों में प्रत्येक पृष्ठ पर दो वाक्य हैं और शब्दों की संख्या बढ़ा दी गई है। इसमें भी प्रत्येक पृष्ठ पर चित्र दिए गए हैं। वाक्य संरचना में दोहराव है पर पहले स्तर के मुकाबले थोड़ा कम। इस स्तर पर भी कहानियों में एक ही घटना या समस्या का ज़िक्र है।

तीसरा स्तर — पिछले दो स्तरों की तरह इस स्तर पर भी दस कहानियाँ हैं और प्रत्येक कथानक की दो-दो कहानियाँ हैं। कहानियों में हर पृष्ठ पर तीन वाक्य हैं। कहानियों में एक बड़ी घटना के अंदर दो-तीन छोटी घटनाओं का विस्तार किया गया है। नए शब्दों की संख्या दूसरे स्तर के मुकाबले ज़्यादा है। इसमें भी प्रत्येक पृष्ठ पर चित्र दिए गए हैं।

चौथा स्तर — इस स्तर की दस कहानियों में प्रत्येक पृष्ठ पर एक चित्र और चार वाक्य हैं। कहानी में दो-तीन छोटे-छोटे कथानक हैं जिससे नए शब्दों की संख्या भी बढ़ गई है। कहानी के कथानकों में दोहराव रखा गया है लेकिन वाक्य संरचना में दोहराव बहुत कम है।

बच्चे जब एक स्तर की कहानी पढ़ लेने के बाद अगले स्तर की किताबें उठाएँगे तो खुद उनका मनोबल बढ़ेगा कि वे आगे बढ़ें। उन्हें इस बात की छूट

होगी कि वे पहले पढ़ी गई किताबों को फिर से दोबारा पढ़ सकते हैं। पढ़ी गई चीज़ को इच्छानुसार बार-बार पढ़ने का शैक्षिक महत्त्व होता है, लेकिन ऐसी छूट स्कूलों में मिलने वाली पाठ्यसामग्री में कम ही मिलती है। ऐसी छूट देने से न केवल बच्चे का आत्मविश्वास बढ़ता है कि वह पहले पढ़ी हुई चीज़ को बेहतर समझ पाया बल्कि उसको कई अवधारणाओं को नए दृष्टिकोण से समझने का मौका भी मिलता है।

बरखा में बच्चों के रोज़मर्रा के अनुभव

बरखा की कहानियाँ बच्चों के परिवेश और उनके रोज़मर्रा के अनुभवों के इर्द-गिर्द बुनी गई हैं। अपने परिवेश और अनुभवों को कहानियों में पाकर बच्चों को अनुमान लगाते हुए समझकर पढ़ने में मदद मिलेगी। बरखा के सभी पात्र छोटे बच्चे हैं जो हमारे पाठक बच्चों की उम्र के ही हैं। कहानियों को रचते समय यह बात सबसे ज़्यादा ध्यान में रखी गई है कि प्रत्येक कहानी ऐसी छोटी-सी चीज़ या घटना पर आधारित हो जो इस उम्र के बच्चों को बहुत महत्वपूर्ण और रोचक लगती है। घटनाओं को बच्चों की नज़र से विस्तारित किया गया है। अगर कोई चीज़ ज़मीन पर गिर जाए तो बच्चे बड़ों की तरह सफ़ाई करने के लिए व्यग्र नहीं होते। चिड़िया का अंडा दिखने पर बच्चों की खुशी की सीमा नहीं रहती और उसे बिल्ली या कुत्तों से बचाने की ज़िम्मेदारी खुद ही महसूस करने लगते हैं। ऐसी स्थितियों में बच्चे जिस तरह के काम करते हैं, वही इन कहानियों का मुख्य तत्व है।

कहानियों में दोहराव

बच्चे अपने आप को कहानियों से जोड़ पाएँ, इसके लिए परिचित संदर्भों का इस्तेमाल किया गया है। कहानी को चित्रों की मदद से समझने के बाद बच्चे जब दोहराए गए वाक्यों पर बार-बार नज़र डालेंगे तो वे स्वतः समझ जाएँगे कि नीचे क्या लिखा हुआ है। कहानी समझने के साथ-साथ बच्चे कुछ सरल वाक्यों को पढ़ना भी सहजता से सीख जाएँगे। बरखा की कहानियों में सभी वाक्य आम बोलचाल की भाषा के हैं। इससे बच्चों को मौखिक और लिखित भाषा में तालमेल बैठाने में मदद मिलेगी। वे सहज रूप से यह जान जाएँगे कि बोली हुई बात को कैसे लिखा जाता है।

चित्रों में कहानी

बरखा के चारों स्तरों की सभी कहानियों में प्रत्येक पन्ने पर एक चित्र दिया गया है। स्कूल के शुरुआती दौर में जब बच्चे लिखित सामग्री नहीं पढ़ पाते हैं, तब

भी वे चित्रों की मदद से कहानियों को समझ लेंगे। इस अपेक्षा के साथ *बरखा* में चित्रों पर विशेष ध्यान दिया गया है। चित्रों को कहानी की घटनाओं तक सीमित नहीं रखा गया है बल्कि उनमें ज़्यादा से ज़्यादा जीवंतता लाने की कोशिश की गई है, जिससे चित्र असली जीवन की झलकियाँ दिखा पाएँ। इससे बच्चों को चित्रों का मज़ा लेने, कहानी समझने और चीज़ों के बारे में बात करने के पर्याप्त अवसर मिलेंगे। चित्रों में बच्चों को गरिमा के साथ प्रस्तुत किया गया है। उनकी बालसुलभता न बढ़ा-चढ़ा कर दिखाई गई है और न ही उसे घटाया गया है। कहानियों में अक्सर बच्चों को रूढ़ रूप में प्रस्तुत किया जाता है पर *बरखा* में बच्चों की प्रस्तुति सामान्य जीवन जैसी ही की गई है। इससे पाठक बच्चे कहानी से बेहतर रूप से जुड़ पाएँगे और पात्रों में अपना प्रतिबिंब ढूँढ़ पाएँगे।

भाषा में नैतिकता एवं मूल्य

यह एक आम मान्यता है कि बच्चों को जो भी पढ़ने के लिए दिया जाए, उससे वे कुछ-न-कुछ सीखें ज़रूर। *बरखा* की संकल्पना और कहानियों की रचना-प्रक्रिया, दोनों स्तरों पर बच्चों को मूल्य सिखाने के वयस्कों के सामान्य आग्रह से बचने की भरसक कोशिश की गई है। जीवन की सरलता और बच्चों की छोटी-छोटी खुशियों को भाषा में पिरोने का प्रयास किया गया है।

भाषा अपने आप में एक संस्कार है। प्रकाशित सामग्री की भाषा बच्चों के अनुभवों को जुबान दे सके, उनके मन को स्पर्श कर सके, यही उसकी सबसे बड़ी चुनौती है। कौन बच्चा नहीं चाहता कि वह साहसी बने, निर्भीकता से खतरों का सामना करे, कठिन परिस्थितियों में भी न घबराए और बड़ों के सामने अपनी बात दृढ़ता से रख पाए। सभी बच्चे अपने सामान्य जीवन में ऐसे छोटे-छोटे प्रयास करते रहते हैं। बच्चों की इसी अभिलाषा और सहजता को *बरखा* में स्थान दिया गया है।

बरखा की कहानियों में मूल्य इस तरह पिरोए गए हैं कि मानवीय संवेदना स्वयं ही उभर आती है। मिसाल के लिए *तबला* कहानी में जीत का अपने पिता की तबला बजाने की कला को स्वयं सीखने की इच्छा रखना अपने आप में एक बहुत बड़ा मूल्य है। *नानी का चश्मा* कहानी में रमा जिस चिंता और व्यग्रता के साथ अपनी नानी का चश्मा ढूँढ़ती है, उससे एक बुजुर्ग के प्रति एक छोटे बच्चे की संवेदनशीलता उभरती है। *तालाब के मज़े* कहानी में काजल और माधव जब बगुलों को उड़कर जाते हुए देखते हैं और अपने आप को समझाते हैं कि बगुले

अगले साल फिर आएँगे तो स्वतः ही इंतज़ार करने, प्रकृति के चक्र को समझने और दूसरे को उसकी इच्छा और जरूरतों के साथ स्वीकार करने का मूल्य उभर आता है। इस तरह के मूल्य बच्चों की ज़िंदगी में सहज रूप से शामिल रहते हैं। बच्चों की सहजता, उनकी ईमानदारी, हर समय कुछ नया सीखने की चाह, बड़ों का प्यार पाने की इच्छा और हर काम खुद करने की चेष्टा, उन सबसे बड़े नैसर्गिक संस्कारों और मूल्यों में से हैं जिनके द्वारा अध्यापक और माता-पिता बच्चों के संस्कारों को समझ पाएँगे।

पढ़ने के संसाधन

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) के तीसरे अध्याय में बच्चे पढ़ना क्यों नहीं सीखते? शीर्षक के तहत यह सिफ़ारिश की गई है कि कक्षा में छपी हुई सामग्री की बहुतायत हो, संकेतों, चार्ट, कार्य संबंधी सूचना आदि उसमें लगे हों ताकि विभिन्न अक्षरों की ध्वनियाँ सीखने के साथ वे लिखित संकेतों की पहचान भी कर सकें। आज स्कूली व्यवस्था में इन सभी महत्वपूर्ण तथा उपयोगी संसाधनों का अभाव है, जो बच्चों के विकास के लिए ज़रूरी होते हैं। प्रायः संपन्न वर्गों के बच्चों को ऐसे संसाधन घर पर ही मिल जाते हैं, जैसे- किताबें, पत्रिकाएँ, अख़बार और उनको नियमित रूप से पढ़े जाने की परिवारजनों की आदत। ग्रामीण एवं शहरी निर्धन वर्ग के बच्चों के जीवन में इस तरह के संसाधनों का अभाव रहता है। चालीस किताबों की इस पुस्तकमाला को कक्षा में रखने से संसाधनों के इस अभाव को दूर किया जा सकता है। बच्चों को पुस्तकमाला मिलने से माता-पिता में भी यह विश्वास पैदा होगा कि उनके बच्चों के पास पढ़ने की सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। *बरखा* पुस्तकमाला से बच्चों को स्वयं की खुशी के लिए पढ़ने की आदत डालने और स्थायी पाठक बनाने में मदद मिलेगी।

शिक्षकों की भूमिका

बरखा पुस्तकमाला इस उद्देश्य के साथ विकसित की गई है कि इससे शिक्षकों को पाठ्यचर्या की अपेक्षाओं को पूरा करने में मदद मिले। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाए कि पुस्तकमाला पाठ्यपुस्तक नहीं है। इस पुस्तकमाला को एक पूरक सामग्री के रूप में देखा जा सकता है, जो बच्चों को पढ़ने के लिए दी जानी है। शिक्षकों से यह अपेक्षा है कि वे इस क्रमिक पुस्तकमाला को कक्षा में ऐसे स्थान पर रखेंगे जहाँ से बच्चे आसानी से किताबें उठा सकें। शिक्षक बच्चों को *बरखा* की किताबें पढ़ते रहने के लिए निरंतर प्रोत्साहित करें। उन्हें कहानियों का

परिचय देते रहें और पात्रों तथा चित्रों के बारे में चर्चा करें। यह पुस्तकमाला बच्चों के लिए ही है, इसीलिए बच्चों को देते समय किताबों के फटने या खराब होने की चिंता न करें।

शिक्षकों को यह प्रयास करना है कि बच्चे कहानियों को स्तरवार पढ़ें, यानि पहले स्तर की दस कहानियाँ पढ़ने के बाद वे दूसरे स्तर की कहानियाँ शुरू करें और इस तरह क्रमवार चौथे स्तर तक जाएँ। हालाँकि *बरखा* की कहानियाँ चार स्तरों में बाँटी गई हैं फिर भी शिक्षक इस वर्गीकरण को एक कठोर नियम न मानें और अगर कोई बच्चा चौथे स्तर की किताब पहले उठा लेता है तो उसे डाँटें-फटकारें नहीं। अगर कोई बच्चा एक ही कहानी को बार-बार पढ़ना चाहता है या तीसरे स्तर पर पहुँचने के बाद फिर से पहले स्तर की कहानियाँ पढ़ना चाहता है तो शिक्षक इससे परेशान न हों। ऐसा होना बहुत ही स्वाभाविक है। कुछ कहानियाँ पढ़ लेने के बाद बच्चे का आत्मविश्वास बढ़ जाता है और बच्चा स्वतः ही उन कहानियों को बार-बार पढ़ने का मज़ा लेना चाहता है, जो उसने पहले पढ़ी थीं। उसे यह आशा रहती है कि इस बार वह उन कहानियों को पहले की तुलना में ज़्यादा अच्छी तरह समझ सकेगा। इसलिए शिक्षक बच्चे की पहले पढ़ी हुई कहानियों को बार-बार पढ़ने की चाह को एक उत्साहवर्धक सूचक की तरह लें। यह चाह इस बात का प्रतीक है कि बच्चा अपने विकास के लिए खुद निर्णय ले रहा है और विश्वास के साथ कदम बढ़ा रहा है। शिक्षकों से उम्मीद है कि वे लचीलापन बरतते हुए बच्चों को *बरखा* की कहानियाँ पढ़ने के लिए ज़्यादा से ज़्यादा प्रोत्साहित करेंगे।

क्रमिक पुस्तकमाला की कहानियाँ इस प्रकार हैं-

कथावस्तु	स्तर 1	स्तर 2	स्तर 3	स्तर 4	चरित्रों के नाम
रिश्ते	रानी भी मुनमुन और मुनू	ऊन का गोला हिच हिच हिचकी	मौसी के मोझे मेरी जैसी	पीलू की गुल्ली नानी का चश्मा	रमा और रानी
पशु-पक्षी कीट-पतंगे	तोता मिठाई	मोनी चिमटी का फूल	कूदती ज़ुराबें तालाब के मञ्जे	चुन्नी और मुन्नी मिमी के लिए क्या लूँ?	काजल और माधव
वाद्य यंत्र, खेल खिलौने	गिल्ली-डंडा छुपन-छुपाई	जीत की पीपनी आउट	बबली का बाजा झूला	चलो पीपनी बनाएँ तबला	जीत और बबली
आस-पास	मज़ा आ गया मिली का गुब्बारा	हमारी पतंग शरबत	मिली के बाल तोसिया का सपना	मिली की साइकिल पका आम	तोसिया और मिली
खाने की चीज़ें	मीठे-मीठे गुलगुले फूली रोटी	पतल चावल	चाय गोलगप्पे	गेहूँ भुट्टा	जमाल और मदन

कहानी कहाँ खो गई

कृष्ण कुमार*

अब ऐसे लोग बड़ी कठिनाई से मिलते हैं जो अपने बच्चों को रोज़ एक कहानी सुनाते हों। पंचतंत्र के किसी प्रसंग का ज़िक्र सुनकर सात-आठ वर्ष के बच्चों के चेहरों पर परिचय का भाव प्रकट नहीं होता। बहुत-सी कहानियाँ मुँह-जुबानी सुना सकने वाले व्यक्ति शहरों और कस्बों में दुर्लभ हो गए हैं और गाँवों में भी लगातार कम होते जा रहे हैं। नौजवान माता-पिता अपने बच्चों को किताब या पत्रिका से बाँचकर ही रोज़ एक कहानी सुना दें, यह भी ज़्यादा देखने को नहीं मिलता। ऐसी किताबें अब मुश्किल से ही मिलती हैं जिनमें छपी हुई कहानियाँ मजे में सुनाई जा सकें। लोक कथाओं के कई उम्दा संकलन पंद्रह-बीस वर्ष पहले तक उपलब्ध थे; अब रद्दी संकलन भी ढूँढ़ने से मिलते हैं।

बच्चों को कहानी सुनाने की एक लम्बी परंपरा रही है। हाल के अतीत में इस परंपरा का हास हुआ है। और यह हास बिल्कुल स्वाभाविक था। कहानी परंपरागत रूप में जिन परिस्थितियों में सुनाई जाती थी, वे आज के पारिवारिक और सामाजिक जीवन में उपलब्ध नहीं हैं। संयुक्त परिवार और गाँव-मोहल्ले की पारम्परिक बनावट, जिसमें कहानी सुनाने की कला फली-फूली, अब व्यापक स्तर पर नहीं बची। लेकिन परिवार और समाज की नई परिस्थितियों में बच्चों को कहानी सुनाने की उतनी ही ज़रूरत है जितनी पहले थी।

सामाजिक संगठन में बदलाव की जिस प्रक्रिया से हम अब गुज़र रहे हैं, उससे मिलती-जुलती प्रक्रियाओं से दुनिया के कई औद्योगिक समाज पहले गुज़र चुके हैं। इन समाजों में बच्चों को कहानी सुनाने की परम्परा का ठीक वैसा हास हुआ जैसा हम अपने यहाँ आज देख रहे हैं। किन्तु अब इन समाजों में कहानी सुनाने की कला को नए सिरे से प्रोत्साहन दिया जा रहा है। पाँच वर्ष पूर्व अमरीकी मनोविश्लेषक ब्रूनो बैटेलहाइम ने एक पुस्तक “मोह के उपयोग” (यूजेज़ ऑफ़ इन्वेंटमेंट) लिखी थी। इस पुस्तक में कही गई मुख्य बात यह है कि छोटे बच्चों के भावनात्मक विकास की कई गहरी ज़रूरतें नियमित रूप से परीकथाएँ सुनकर पूरी होती हैं। उत्तरी अमरीका में इस पुस्तक की व्यापक चर्चा हुई और इससे

*निदेशक, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016

कहानी सुनाने की कला को पुनर्जीवित करने में लगे अध्यापकों, माता-पिताओं और शिक्षाविदों को मदद मिली।

लोक कथाओं और परीकथाओं की संरचना छोटे बच्चों की सोचने की शैली से मेल खाती है, और यही इन कहानियों के प्रति छोटे बच्चों के आकर्षण का खास आधार है। बहुत गम्भीर विपदाओं के कल्पनाशील और न्याय-सम्मत हल इन कहानियों की संरचना में गुँथे होते हैं। मनुष्य की सामाजिकता और प्रकृति और प्रकृति की चुनौती इन कहानियों की अन्तर्धारा होती है। यह धारा समाज में अपना जीवन एक छोटे शरीर और तमाम तरह की आशंकाओं के साथ शुरू कर रहे छोटे बच्चों की कई मानसिक माँगें पूरी करती है।

इन कहानियों को सुनते हुए छोटे बच्चे अपनी मातृभाषा की बुनियादी लयों के सम्पर्क में आते हैं। शब्द और वाक्य रचना का एक पूरा भण्डार उनके हाथ लगता है। इस भण्डार से वंचित रह जाने वाले बच्चे कुछ बड़े होकर जब पढ़ना और लिखना सीखते हैं, तब उनके लिए भाषा एक यात्रिक चुनौती बन जाती है। वह सहज ज़रूरत या इच्छा नहीं बन पाती। बाद में वे ध्यानपूर्वक सुनने, संयत ढंग से बोलने या संवाद में हिस्सा लेने जैसी क्षमताओं का विकास नहीं कर पाते हैं।

छोटे बच्चों को कहानी सुनाने की वकालत कई आधुनिक शिक्षाविदों ने की है, और इसी वकालत के फलस्वरूप पश्चिमी देशों में स्कूलों और पुस्तकालयों ने कहानी सुनाने को अपने नियमित कार्यक्रमों में शामिल किया है। इधर भारत में ठीक वह स्थिति दोहराई जा रही है जो अमरीका और यूरोप में तीस वर्ष पहले तक रही। हमारे स्कूलों में आजकल जल्दी से जल्दी पढ़ना-लिखना सिखाने पर जोर दिया जा रहा है। ऐसे बच्चों की कमी नहीं है जिन्हें तीन-चार वर्ष की आयु में ही अक्षरज्ञान करा दिया गया हो। ध्वनि और लय के संस्कारों के अभाव में प्राप्त किया गया यह अक्षरज्ञान न केवल अनुपयोगी होता है, बल्कि अभिव्यक्ति की क्षमताओं के विकास में बाधा भी उत्पन्न करता है। देश में हवा आजकल ऐसी है कि हर क्षेत्र में लोग तुरन्त फल चाहते हैं। दवा लेते ही बीमारी दूर हो जाए और दौड़ना सीखने तक बच्चे को गिनती गिनना तथा अक्षर पहचानना आ जाए, ये आजकल के फैशन हैं। इस वातावरण में कहानी सुनाने जैसा धीमा और नियमित काम कौन करे?

कहानी सुनाने की संस्थायी शुरुआत हमारे यहाँ रेडियो ने की थी और कभी-कभी दूरदर्शन भी यह रस्म निभा लेता है। हमारे यहाँ इन प्रसार माध्यमों का बच्चों के लिए उपयोग ठीक उस तरह हुआ है जिस तरह बाल पत्रिकाओं के कहानी कहाँ खो गई

सम्पादकों ने अपनी विक्रय क्षमता का उपयोग किया है। रेडियो पर बच्चों से बतियाने वाले दादा और दादियाँ तथा बच्चों की पत्रिकाओं के सम्पादक बच्चों से संवाद नहीं करते, उन पर झुककर उन्हें तोड़ी-मरोड़ी हुई भाषा में पगी उपदेश-मूलक कहानियाँ और कविताएँ सुनाते हैं। बच्चों पर झुकने की यह मुद्रा अब इतनी आम हो गई है कि कई बाल साहित्यकार इस मुद्रा की वकालत करते हुए मिल जाते हैं। वे यह मानकर चलते हैं कि बच्चों को कहानी सुनाने के लिए उन्हें स्वयं बच्चा बनना पड़ेगा। इस कोशिश में वे अपनी भाषा की वह स्वाभाविक लय और अपने व्यक्तित्व की वह सहजता खो देते हैं जो बचपन में मुझे कहानी सुनाने वाले सिरवैया बब्बा की शैली में थी। वह झुककर नहीं, आराम से बैठकर कहानी सुनाते थे, और उनसे कहानियाँ सुनते हुए मुझे यह भूलने की ज़रूरत कभी महसूस नहीं हुई कि वे मुझ से पचास वर्ष बड़े थे। बड़े और छोटे के बीच का फासला कहानी स्वयं तय करती है। इस फासले को किसी कृत्रिम मुद्रा, मुस्कान या सम्बोधन से ढँकने की ज़रूरत नहीं।

हिन्दी में अब तक लोक कथाओं और परीकथाओं को लेकर यह बहस हो लेती है कि ये कहानियाँ बच्चों के लिए आज भी उपयोगी हैं या नहीं। जो लोग इन कहानियों को नुकसानदेह बताकर विज्ञान और यथार्थबोधक साहित्य की वकालत करते हैं, उनका मुख्य तर्क यह होता है कि ये कहानियाँ बच्चों को एक काल्पनिक दुनिया में हरने की प्रेरण देती हैं। क्रांति के बाद रूस में ठीक यही बहस जोरों से चली थी और वहाँ के महान शिक्षाविद् और बाल साहित्यकार कोर्नेइ चुकोव्स्की ने परीकथाओं और लोक कथाओं का तगड़ा समर्थन किया था। उनका कहना था कि इन कहानियों का विरोध करने वाले लोग पोंगा क्रांतिकारी हैं जो न बच्चों को समझते हैं, न लोक साहित्य को। ऐसे लोगों की हमारे यहाँ कमी नहीं है। हमारी प्रसारण व्यवस्थाओं और शिक्षा से जुड़े अनेक लोग यह कहते मिल जाएँगे कि कहानी सुनाने का मुख्य फायदा यह है कि कहानी के ज़रिए कोई अच्छी सीख बच्चों को दी जा सकती है। इस मान्यता के बल पर वे सब सीख को ध्यान में रखकर उसके इर्द-गिर्द कहानी बुन सकते हैं। उनके लिए यह समझना कठिन है कि कहानी कहने की उपयोगिता कहानी की सीख नहीं, कहने के धीरज और ढंग में है। कहानी के ज़रिए नैतिकता, ज्ञान-विज्ञान, इतिहास और संस्कृति बच्चों को देने की बात बहुत हो चुकी और इस बात के परिणाम कोई खास नहीं निकले। क्यों न अब इस बात पर जोर दिया जाए कि कहानी सुनने लायक हो?

कहानी सुनाने के बाद

रमाकांत अग्निहोत्री*

कहानी-दयालु गाड़ीवान और चालाक मगरमच्छ

एक दिन की बात है, एक कौवा नदी के किनारे-किनारे उड़ रहा था।

उड़ते-उड़ते उसने किनारे के करीब उथले पानी में एक मगरमच्छ को चुपचाप मजे से पड़े देखा। वह मगरमच्छ मोटा और सुंदर लग रहा था। यह सोचकर कि मगरमच्छ के मरने पर उसका शरीर कितनी बढ़िया दावत देगा, कौवे के मुँह में पानी आ गया।

कौवा इधर-उधर उड़ता गया और उसने कई बार मगरमच्छ को देखा। धीरे-धीरे उसके मन में यह खयाल और ज़्यादा बैठता गया। आखिरकार उसके दिमाग में एक तरकीब आई और वह नदी के उस किनारे के करीब उतरा जहाँ मगरमच्छ लेटा था।

उसने कहा- “नमस्ते, दोस्त मगरमच्छ, क्या तुम जानते हो कि पास ही में इससे भी काफ़ी ज़्यादा अच्छी एक और नदी है?”

“मैं तो नहीं जानता”, मगरमच्छ ने उत्तर दिया।

“तो फिर मैं ही तुम्हें वहाँ लेकर चलता हूँ”, कौवे ने दोस्ताना अंदाज़ में कहा।

“अगर तुम ऐसा करोगे तो मैं तुम्हारा बहुत अहसानमंद रहूँगा”, मगरमच्छ ने उत्तर दिया।

“तो फिर आओ मेरे साथ”, कौवा बोला। “मेरे पीछे-पीछे आओ। यहाँ से नदी करीब आधा मील ही दूर है, क्या तुम इतना चल पाओगे?”

“हाँ-हाँ! क्यों नहीं, यह भी कोई दूरी है” मगरमच्छ खुश होकर बोला।

और वे दोनों चल पड़े।

दोनों चलते गए, कौवा नाचता-कूदता और मगरमच्छ उसके पीछे धीरे-धीरे चलता हुआ। वह बहुत थक रहा था और उसे लग रहा था कि वे आधे मील से काफ़ी ज़्यादा का सफ़र तय कर चुके हैं।

*प्रोफ़ेसर, भाषा विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

उसने पूछा- “मित्र कौवे, क्या हम पहुँचने वाले हैं? मुझे लगता है हम काफ़ी दूर आ गए हैं और मैं अब थक रहा हूँ।”

“क्या? अभी से थक गए?” कौवे ने ऐसे पूछा जैसे उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा हो। फिर वह बोला, “मेरे दोस्त, यदि तुम उस शानदार नदी तक पहुँचना चाहते हो जिसका जिक्र मैंने तुमसे किया है तो अभी तुम्हें और भी बहुत दूर चलना होगा।”

बेचारा मगरमच्छ थका-हारा घिसटता गया, परंतु धीरे-धीरे वह कमजोर होता जा रहा था और आखिरकार पस्त होकर वह वहीं गिर पड़ा। दुष्ट कौवा उसे अपनी नदी से करीब तीन मील दूर ला चुका था।

“वहीं पड़े रहो मेरे दोस्त”, धोखेबाज़ कौवा बोला- “जब तुम्हारे इस मोटे-ताजे शरीर में से प्राण निकल जाएँगे तो मैं तुम्हें आकर खा लूँगा।” और वह उस मगरमच्छ को मरने के लिए छोड़कर उड़ गया। जाते समय भी उसके मुँह में मगरमच्छ को खाने के लालच से पानी भर आया।

मगरमच्छ वहाँ भूखा, प्यासा आँखों में आँसू भरे निढाल पड़ा रहा। तभी एक आदमी बैलगाड़ी लिए वहाँ से गुज़रा और मगरमच्छ को वहाँ पड़े रोते देखकर उसने अपनी गाड़ी छोड़ी और ज़मीन पर घुटनों के बल झुककर यह देखने लगा कि क्या वह इस अभागे जानवर की कुछ मदद कर सकता है।

“ओ अच्छे गाड़ीवान, मेरे स्वामी!” मगरमच्छ हाँफते हुए बोला, “कृपा करके मुझे गाड़ी में बैठाकर मेरी नदी तक ले चलिए। मैं प्यास के मारे मर रहा हूँ और अब मैं एक कदम भी नहीं चल सकता।”

उस दयालु गाड़ीवान ने मगरमच्छ को उठाकर गाड़ी में रखा और उसे नदी तक वापस ले गया।

जब वे नदी किनारे पहुँचे तो गाड़ीवान मगरमच्छ को वहीं पर छोड़ने लगा, परंतु मगरमच्छ ने उससे प्रार्थना की कि वह अपनी बैलगाड़ी को थोड़े से गहरे पानी तक ले जाए, “मैं इतना कमजोर हो गया हूँ कि तैर नहीं सकता।” वह बहुत भूखा भी था।

दयालु गाड़ीवान अपनी बैलगाड़ी को नदी में वहाँ तक ले गया जहाँ पर पानी उसके बैलों के पैरों से काफ़ी ऊपर तक आ रहा था, फिर उसने मगरमच्छ को पानी में गिरा दिया। मगरमच्छ ज़ोर के छपाके से पानी में उतरा। गाड़ीवान नदी

के किनारे आने की ओर गाड़ी को पलटाने ही वाला था कि उसने देखा कि मगरमच्छ ने अपने बड़े-बड़े जबड़ों में उसके एक बैल का पैर कसकर पकड़ लिया था। ओह! मगरमच्छ एक चालाक धोखेबाज़ जानवर होता है।

गाड़ीवान दुःखी हुआ कि उसके उपकार का बदला इतनी कृतघ्नता से दिया गया।

“मेरे बैल का पैर छोड़, छोड़ दे, ओ निकृष्ट तुच्छ मगरमच्छ वह चिल्लाया।”

परंतु मगरमच्छ तो कस कर पकड़े ही रहा। चिल्लाने की आवाज़ एक खरगोश ने सुनी और वह भागता हुआ पानी के किनारे तक यह देखने आया कि क्या गड़बड़ है। उसने फटाफट सारी स्थिति समझ ली और गाड़ीवान से बोला— “अपनी गाड़ी चलाने वाली छड़ी से इसे जोर से मारो मारो! इसे जोर से मारो।” गाड़ीवान ने मगरमच्छ को पूरी ताकत से छड़ी मारी और आश्चर्यचकित मगरमच्छ ने एक पल में बैल का पैर छोड़ दिया। गाड़ीवान ने मौके का फ़ायदा उठाया और अपनी गाड़ी पानी से निकाल कर किनारे ले गया। फिर खरगोश को धन्यवाद कर वह अपने रास्ते चल पड़ा।

मगरमच्छ यह तो भूल गया कि कैसे जिस गाड़ीवान ने उसे मौत के मुँह से वापस खींचा उसी के साथ उसने छल-कपट किया। उसे खरगोश के बीच में हस्तक्षेप करने पर बहुत जोर से गुस्सा आया और उसने ठान लिया कि वह खरगोश से बदला लेकर रहेगा।

अगली सुबह जब खरगोश नदी किनारे पानी पीने आया, तो मगरमच्छ उसका इंतज़ार कर रहा था। वह बहुत कम गहरे पानी में था और उसके शरीर का ज़्यादा भाग पानी के बाहर था और दिखाई दे रहा था। मगरमच्छ को यह बात मालूम थी। वह बिलकुल स्थिर हो गया जिससे कि खरगोश को ऐसा लगे कि पानी में किनारे के पास लकड़ी का कोई लट्टा पड़ा है।

लेकिन खरगोश इतनी आसानी से धोखा खाने वाला नहीं था। वह पानी के किनारे तक गया और इस तरह बोला मानो सोचते-सोचते बोल रहा हो। “अच्छा, अब देखूँ यह क्या है। लकड़ी के लट्टे नदी में पानी की दिशा में बहते हैं और मगरमच्छ पानी से विपरीत दिशा में तैरते हैं।”

मगरमच्छ ने ये शब्द सुने और ज़्यादा से ज़्यादा लकड़ी के लट्टे की तरह दिखने के लिए वह पानी के बहाव की दिशा में थोड़ा-सा चला और तब ही

खरगोश ने मौके का फ़ायदा उठाया। ख़ूब सारा पानी पीया और भाग खड़ा हुआ।

अगली सुबह खरगोश फिर पानी पीने नदी किनारे आया। मगरमच्छ पहले की तरह उसका इंतज़ार कर रहा था और इस बार बिना यह ध्यान दिए कि खरगोश क्या कह रहा है, वह बिलकुल स्थिर खड़ा रहा। इस बार खरगोश वास्तव में धोखे में आ गया। उसने सोचा कि वह शायद पानी के किनारे पड़ा लकड़ी का एक लट्टा ही है फिर भी, वह पानी पीने के लिए झुकने से पहले पानी के बहाव की दिशा में थोड़ा-सा आगे बढ़ा। इस दौरान चालाक मगरमच्छ उस पर नज़र रखे हुए था और जैसे ही खरगोश ने पानी पीना शुरू किया मगरमच्छ तेज़ी से आगे बढ़ा, अपने विशाल जबड़े खोले और खरगोश को झपट कर पकड़ लिया।

खरगोश को जंगल के सारे जानवरों में बुद्धिमान खरगोश के नाम से जाना जाता था। उसे उन सबमें सबसे चतुर माना जाता था। मगरमच्छ को कितना घमंड हुआ खरगोश को बुद्धि में हराकर, इसका अंदाज़ लगाना कठिन है। उसने अपने दाँतों के बीच खरगोश ऐसे पकड़ रखा था जिससे सारी दुनिया देख सके कि उसने क्या हासिल कर लिया था। अपनी पूँछ को जोर से पटक कर खूब हलचल मचाता वह “ही, ही, ही!” हँसता हुआ तैरने लगा।

उसके मुँह में जकड़ा खरगोश भी उसके साथ-साथ चलता हुआ “ही, ही, ही” हँसने लगा, “अरे, तुम तो एक चतुर मगरमच्छ हो, है न?”

‘ही, ही, ही!’ मगरमच्छ जोर से गुरगुराया।

‘ही, ही, ही!’ खरगोश ने उत्तर दिया।

‘ही, ही, ही!’ मगरमच्छ फिर हँसा।

‘हा, हा, हा!’ खरगोश जोर से बोला।

मगरमच्छ अपनी सफलता के घमंड में इतना चूर था कि वह भी चिल्लाया ‘हा, हा, हा!’

जाहिर है, ऐसा करने के लिए उसे अपना मुँह चौड़ा खोलना पड़ा। होशियार खरगोश ने ठीक यही सोचा था। जब मगरमच्छ अपने जबड़ों को चौड़ा खोलकर ‘हा, हा, हा!’ गुरा रहा था, खरगोश ने नदी किनारे के कम गहरे पानी में छलाँग लगाई और फिर क्रोधित मगरमच्छ पर ‘हा, हा, हा!’ हँसता हुआ, वह खुशी-खुशी भाग गया।

मगरमच्छ कितना मूर्ख जानवर है। पहले तो वह कौवे की बातों में आ गया और फिर उसने दयालु गाड़ीवान के प्रति इतनी अकृतज्ञता दिखाई। उसके बाद से पशु जगत में मगरमच्छ बेवकूफ और धूर्त जानवर के रूप में जाना जाने लगा, एक ऐसा जीव जिसकी कभी मदद नहीं करनी चाहिए और जिस पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए।

“दयालु गाड़ीवान...” के साथ कक्षा में क्या कर सकते हैं?

कक्षा में अपना बचपन हम लोग भूले से भी नहीं भूलते। बचपन के दोस्त तथा बचपन के खेल हमें रह-रहकर याद आते हैं। बचपन का एक बहुत ही खूबसूरत तथा प्यारा हिस्सा होता है, बचपन में सुनी कहानियाँ। दादा-दादी, नाना-नानी, माँ-बाप, घर के अन्य लोगों और दोस्तों से सुनी कहानियाँ हमारे जीवन का अविभाज्य अंग बन जाती हैं। जो कहानी हम अपनी नानी से सुनते हैं, वही बड़े चाव के साथ अपने बच्चों और पोते-पोतियों को सुनाते हैं। और इसी प्रकार, बहुत धीरे-धीरे बदलती कहानियों का सिलसिला चलता रहता है। ये कहानियाँ हमारे वर्तमान को हमारे भूत एवं भविष्य के साथ जोड़ने का एक सशक्त माध्यम बन जाती हैं। फिर भी शिक्षाविद् तथा अध्यापकगण कहानी के महत्त्व को नहीं पहचानते। अक्सर लोग मानते हैं कि शिक्षा में ‘कहानी सुनाने’ का कोई विशेष स्थान नहीं, इससे केवल कुछ मनोरंजन भर होता है। पाठ्यक्रम में कहानी सुनना-सुनाना कोई विशेष भूमिका अदा नहीं कर सकता आदि। लेकिन यह मान्यता सही नहीं है।

कहानी सुनने से बच्चों को बेहद खुशी होती है। यही एक कारण काफ़ी है कहानी को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाने के लिए। लेकिन कहानी सुनने से तो और भी कई फ़ायदे होते हैं। सबसे पहले तो कहानी सुनते समय बच्चे सब्र से सुनना सीखते हैं और उनकी एकाग्रता से सुनने की शक्ति पैनी होती जाती है। बच्चों की स्मरण-शक्ति का भी अच्छा-खासा प्रशिक्षण होता है कहानी सुनने की प्रक्रिया में। कहानी को समझने तथा अन्य लोगों को सुनाने के लिए बच्चे को कहानी के पात्र, घटनाओं तथा घटना-क्रम को ठीक से याद रखना पड़ता है। वास्तव में कहानियों के कई पात्र तो सदैव हमारे साथ रहते हैं। किसी के सपनों में अर्जुन बसा है तो किसी के खयालों में भीम, कोई मन-ही-मन बंदर व मगरमच्छ की बातचीत दोहराता है तो कोई खरगोश और शेर की। तीसरी बात, कहानी सुनने-सुनाने से कल्पना-शक्ति का खूब विकास होता है। कहानी का संसार ऐसा है जहाँ न तो कहानी सुनाने के बाद

व्याकरण के नियम हैं, न गणित का भय, न विज्ञान का डर और न सामाजिक विज्ञान की बोरियत। बच्चे अपनी कल्पना शक्ति से कहानी के कई वैकल्पिक जाल बुनते हैं तथा उसके अधिक से अधिक रोमांचकारी अंत तलाश करते हैं। आपने देखा होगा कि एक ही कहानी सुनाने का हर व्यक्ति का अलग अंदाज़ होता है। कहानी बच्चे के लिए एक सार्थक दुनिया है। चौथी बात यह कि बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए कहानी सुनाने से अधिक बेहतर तरीका और कोई नहीं। जो कहानी बच्चे पहले से जानते हैं उसे खुद पढ़ना चाहते हैं, पढ़कर दूसरों को सुनाना चाहते हैं, उसके बारे में कुछ लिखना चाहते हैं, अपनी इच्छा से कहानी को आधार बनाकर चित्र बनाना चाहते हैं। बच्चों के लिए सार्थक शिक्षा का इससे सशक्त माध्यम और क्या होगा? हम सबका अनुभव है कि जिन बच्चों को माँ-बाप या अध्यापक पढ़कर कहानी सुनाते हैं, वे पढ़ना जल्दी से सीख जाते हैं। बच्चे के सामने किताब रखकर कहानी सुनाने का आपको भी अनुभव होगा। खासकर ऐसी कहानी जो बच्चे ने पहले से सुन रखी हो। आपके पढ़ने से पहले ही बच्चे अगला शब्द या वाक्य पढ़ लेते हैं। अक्षर, शब्द, वाक्य एवं चित्र की पहचान कितनी सहज हो जाती है बच्चे के लिए। ध्यान देने योग्य बात यह है कि बच्चा समझकर पढ़ना सीख रहा है।

वास्तव में पढ़ना सीखने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि बच्चे वही चीज़ पढ़ें जो उनके लिए अर्थ रखती हो। बिना किसी संदर्भ के वर्ण पहचानने, बारहखड़ी याद करने तथा शब्दार्थ करने से कोई लाभ नहीं। हम सब जानते हैं कि वर्षो ऐसा करने पर भी बच्चे समझकर पढ़ नहीं पाते। उपयुक्त, मनोरंजक, सार्थक और चुनौतीपूर्ण संदर्भ नहीं होंगे तो बच्चे पढ़ना नहीं सीखेंगे। इस तरह की पाठ्य-सामग्री के लिए कहानियाँ ही सबसे उचित हैं। बच्चे जो कहानी एक बार सुन लेते हैं, उसे बार-बार सुनना चाहते हैं और साथियों के साथ बाँटना चाहते हैं। बच्चे अक्सर ज़िद करते हैं कि माँ-बाप उनसे कहानी सुनें। बच्चे के दिमाग में एक सुव्यवस्थित संरचना तैयार पड़ी है। इस कहानी को बच्चा अपना समझता है। एक अध्यापक कक्षा में इस संरचना को लेकर क्या-क्या कर सकता है?

ध्यान रहे कि कहानी के शैक्षणिक प्रयोग पर चर्चा इसलिए नहीं हो रही कि बच्चे इससे ध्वनि-वर्ण संबंध को जान लें, वर्तनी की गलतियाँ सुधार लें या व्याकरण एवं शब्द-संरचना के नियम सीख लें। ये मुश्किल काम हैं। भाषा वैज्ञानिक अभी तक समझ नहीं पाए कि बच्चे इतनी जटिल बातें सहज ही कैसे सीख लेते हैं। हाँ, इतना निश्चित रूप से पता है कि संदर्भ-रहित तरीकों से

सिखाने पर बच्चे अक्सर इन्हें नहीं सीख पाते। यह भी काफ़ी हद तक साफ़ है कि यदि सामग्री मनोरंजक और सार्थक हो तो बच्चे स्वतः ही सहज रूप से ये सब सीख जाते हैं। बोल-चाल की भाषा के सभी नियम - चाहे वे ध्वनि-संरचना के हों या शब्दों के या व्याकरण के - बच्चा स्वयं सीख लेता है और वह भी तीन चार साल की आयु में।

बोल-चाल की भाषा तो अस्थायी होती है, अभी बोली, अभी खत्म। लेकिन छपी हुई सामग्री स्थायी होती है। बच्चे बार-बार उसे पढ़ सकते हैं। यदि सामग्री मनोरंजक और सार्थक है, तो वे खुद उसे बार-बार पढ़ना चाहेंगे। आप तो बस अधिक से अधिक प्रभावशाली ढंग से बच्चों के सामने कहानी पढ़ें और उन्हें खुद कहानी पढ़ने का मौका दें। शेष वे स्वयं सीख जाएंगे।

दयालु गाड़ीवान और चालाक मगरमच्छ कहानी छपी है। आप कक्षा में ऐसी कहानी को लेकर क्या-क्या कर सकते हैं। किस स्तर पर क्या संभव है, यह निर्णय तो स्वयं आपको लेना होगा। पहले तो बच्चों को कहानी सुनाइए बिना किसी किताब के। कहानी सुनाने के अनेक रोचक ढंग हैं। आपको सोचना पड़ेगा कि कौन-सा ढंग इस कहानी के लिए उपयुक्त रहेगा। तैयारी करनी पड़ेगी। हो सकता है आप चित्रों का प्रयोग करना चाहें या हाथ पर चलने वाले पुतलों का। कहानी सुनाने के बाद कुछ बच्चों से भी कहानी सुननी चाहिए। इसके बाद कहानी पढ़ने की प्रक्रिया हो सकती है। हर बच्चे के पास कहानी होनी चाहिए। यह ज़रूरी नहीं, अपेक्षा भी नहीं, कि हर बच्चा कहानी पूरी तरह से पढ़ सके। लेकिन सुनी एवं छपी कहानी में एक गहरा संबंध बनने लगेगा—और यह संबंध बच्चे की अपनी चेतना व संवेदना का हिस्सा होगा कि कौन-सा चित्र कहाँ छपा है? उसके नीचे क्या लिखा है, कहाँ वर्णन है और कहाँ संवाद, शुरू में क्या है और अंत में क्या आदि—ऐसे प्रश्न पढ़ने की प्रक्रिया का बहुत महत्वपूर्ण अंग हैं। बच्चे उन्हीं कविताओं व कहानियों से पढ़ना-लिखना सीखते हैं जिन्हें वे अपना समझते हैं।

जब बच्चों को कहानी अपनी लगने लगे तो उन्हें छोटी-छोटी टोलियों में बाँटकर अनेक महत्वपूर्ण गतिविधियाँ की जा सकती हैं। हर बच्चा 'दयालु गाड़ीवान' की कहानी को अपने ढंग से सुना सकता है। पात्रों के चित्र बना सकता है। मिलजुल कर बच्चे कहानी को एक नाटक में बदल सकते हैं। कौवे और मगरमच्छ, मगरमच्छ और दयालु गाड़ीवान, मगरमच्छ और खरगोश आदि से हुए कहानी सुनाने के बाद

संवादों को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत कर सकते हैं। 'दयालु गाड़ीवान' में बच्चों की कल्पनाशक्ति के लिए भी काफ़ी जगह है। यह कहानी है योजनाएँ बनाने की। हर पात्र यहाँ योजना बनाने में लगा है। कहानी में किसी भी योजना का वर्णन नहीं है—चाहे वह कौवे की हो या मगरमच्छ की या खरगोश की। योजना का पता हमें तभी लगता है जब वह क्रियान्वित होती है। बच्चे इन योजनाओं के बारे में सोच सकते हैं और कई तरह की नई-नई योजनाओं के बारे में सोच सकते हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि कहानी के बारे में बातचीत करने में, उसका नाटकीयकरण करने में, चित्र बनाने में, मगरमच्छ, कौवा, खरगोश या गाड़ीवान बनकर संवाद दोहराने में मुख्य मुद्दा भाषा नहीं है। हमारा ध्यान ध्वनि-संरचना या वाक्य संरचना पर नहीं। हमारा ध्यान इस बात पर है कि बच्चे ऐसी गतिविधियाँ कर रहे हैं जो उनके लिए सार्थक हैं और जिनके द्वारा वे कहानी को 'अपना' कह सकते हैं। इन गतिविधियों में इस बात पर ज़ोर देने से कोई फ़ायदा नहीं कि बच्चे शुद्ध मानकीकृत हिंदी बोलें। यह बहुत अच्छा मौका है बच्चों को अपनी-अपनी भाषा प्रयोग करने की स्वतंत्रता देने का। कक्षा में सदैव उपलब्ध एवं निरंतर दबाई जाने वाली बहुभाषिता का उपयोग करने का यह बहुत अच्छा मौका है।

एक बार बच्चे कहानी को अपना लें तो ध्वनि, शब्द, वाक्य तथा संवाद के स्तर पर अनेक मजेदार, विवेकशील व चुनौतीपूर्ण गतिविधियाँ की जा सकती हैं। इन गतिविधियों की कोई सीमा नहीं—न तो गिनती में और न विषयगत गहराई में। ये गतिविधियाँ करते-करते बच्चे अक्सर ऐसे तथ्य एवं नियम निकाल लाते हैं कि अध्यापक को भी सीखने को बहुत कुछ मिल जाता है। ऐसे पलों में स्तब्ध से हम बच्चों की प्रतिभा व कौशल पर हैरान होते हैं और उनकी दाद देते हैं।

उदाहरण के लिए बच्चों को छोटी-छोटी टोलियों में बाँटकर कह सकते हैं—

कहानी में से ऐसे शब्द निकालकर लिखो—देखिए, अवलोकन, पढ़ने एवं लिखने की प्रक्रिया भी साथ-साथ हो रही है जिनमें कोई मात्रा दिखाई नहीं देती। जैसे लग, यह, मगर, मन, चल आदि। सबसे पहले तो बच्चों को यह अहसास होगा कि ऐसे शब्द वास्तव में बहुत कम हैं। क्या मात्रा यानि स्वर के बिना शब्द बन सकते हैं? 'लग' व 'चल' के 'ल' में क्या अंतर है?

लग - ल् + अ + ग्

चल - च् + अ + ल्

यानि 'लग' के 'ल' में 'अ' की मात्रा है, 'चल' के 'ल' में नहीं। थोड़ी सी

चर्चा और उदाहरणों के बाद बच्चे स्वयं हिंदी ध्वनि-संरचना के कुछ मुख्य नियम स्वयं बताने लगेंगे। एक नियम तो यह कि हिंदी में शब्दांत 'स्वर' नहीं बोला जाता। 'लग' के 'ग' में 'अ' नहीं और 'चल' के 'ल' में भी 'अ' नहीं। दूसरी बात, यह जल्दी ही साफ़ हो जायेगी कि हिंदी में, ठीक वैसे ही जैसे कि संसार की अन्य भाषाओं में, शब्द की संरचना।

व्यंजन-स्वर — व्यंजन-स्वर

यानि CVCV होती है। स्वर के बिना शब्द नहीं बन सकता। अक्सर व्यंजन भी रहते हैं शब्दों में। पर कई बार बिना व्यंजनों के भी शब्द बन सकते हैं। ये सब बातें बच्चे स्वयं कहानी से लिए गए शब्दों की सूची का वर्गीकरण कर बना सकते हैं। उसमें कोई ध्वनि-विज्ञान विशेषज्ञ होने की आवश्यकता नहीं। यथा,

V - आ, ओ आदि (केवल स्वर से बने शब्द)

CV - की, या, से, कि, के, ही, ने आदि। (देखिए 'कि' में 'इ' लिखी पहले जाती है, लेकिन बोली 'क' के बाद ही जाती है, इसलिए CV)

VC - एक, अब, उड़, उन, उस आदि।

CVC - दिन, बात, कान, लग, मन, बार, पास आदि।

CVCV - नदी, रहा, पानी, भूखा, गाड़ीवाला देखा, गिरा, दिया आदि।

बच्चों से कहिए कि इसी प्रकार निम्न शब्दों की संरचना लिखें—

बेवकूफ़, गाड़ीवान, धोखेबाज, कमज़ोर, बैलगाड़ी, पलटाने, उपकार, फटाफट।

अब हर टोली के लिए एक ईनामवाला प्रश्न—कहानी में ऐसे शब्द ढूँढ़ कर लिखो जिनमें दो व्यंजन साथ-साथ आते हों यानि CCVC या CVCC आदि।

शब्दों के स्तर पर गतिविधि देखिए। बच्चे एक बार फिर से कहानी को पढ़ते हैं। अब शायद तीव्र गति से। इस बार ऐसे शब्दों की सूची बनाते हैं जो दोहराए जाते हैं, यथा—किनारे-किनारे। ऐसे शब्द जिनकी संरचना है X-X। सब टोलियों की सूची मिलाकर कुछ ऐसे सूची होगी—

किनारे-किनारे, उड़ते-उड़ते,

धीरे-धीरे, पीछे-पीछे, बड़े-बड़े,

सोचते-सोचते, साथ-साथ,

खुशी-खुशी

कहानी सुनाने के बाद

शायद आपकी कक्षा में कई बच्चे हों जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं है। क्या उनकी भाषा में भी यह संरचना है? सभी भारतीय भाषाओं में (चाहे वह आर्य परिवार की हों या द्रविड़ या मुंडा) यह संरचना खूब इस्तेमाल होती है। चर्चा का विषय है कि 'घर' और 'घर-घर' कहने में क्या अंतर है?

'धीरे' व 'धीरे-धीरे' कहने में क्या अंतर है। क्या हिंदी में X-X ही संरचना है? क्या कुछ ऐसे भी शब्द हैं जहाँ पहले शब्द का कुछ हिस्सा ही दोहराया जाता है। यथा X-X 'घर-वर' यानि 'घर-घर' व 'घर-वर' कहने में क्या अंतर है? क्या शब्दांश दोहराने का कोई नियम है? X-X की जो सूची अभी बनाई है उसे X-X की तरह लिखें—

किनारे-किनारे

उड़ते-वुड़ते

धीरे-वीरे।

रोज़मर्रा के अन्य शब्द भी जोड़ सकते हैं—

चाय-वाय, खाना-वाना,

खिड़की-विड़की, फोन-वोन,

तार-वार, कुर्सी-वुर्सी आदि।

X-X का क्या नियम है? X-X व X-X के अर्थों में क्या अंतर है?

ऐसी अनेक गतिविधियाँ आप स्वयं सोच सकते हैं। कहाँ चंद्रबिंदु लगेगा और कहाँ उसी ध्वनि के लिए केवल बिंदु, बच्चे इसी प्रकार के अवलोकनों से स्वयं सीख सकते हैं। 'पहुँचना' में चंद्रबिंदु है पर 'दोनों' में केवल बिंदु। इसी तरह के और शब्द ढूँढ़िए और अपने-अपने नियम बनाइए। दिमागी कसरत, अवलोकन तथा विश्लेषण और बात ही बात में एक ऐसी बात की समझ जिसको लेकर अध्यापक तथा माँ-बाप बच्चों की गलतियों को लेकर परेशान रहते हैं।

अब थोड़ा आगे बढ़ें। ध्वनि, लिपि व शब्दों से आइए बच्चों के साथ मिलकर कहानी फिर से लिखते हैं। लेकिन अब कहानी के पात्र हैं—

मगरमच्छ की पत्नी

कौवे की पत्नी

गाड़ीवान की पत्नी

खरगोश की पत्नी

(क्या इन सबके लिए हिंदी में शब्द हैं? खरगोशनी चलेगा क्या? मगरमच्छी? कौवी? गाड़ी...)

अपनी-अपनी टोली में बैठे बच्चे कहानी का वह अंश फिर से लिख रहे हैं जो उन्हें अच्छा लगता है। यथा—

बेचारी मगरमच्छ की पत्नी थकी-हारी घिसटती गई, परंतु धीरे-धीरे वह कमजोर होती जा रही थी और आखिरकार पस्त होकर वहीं गिर पड़ी।

वह दुष्ट कौवे की पत्नी उसे अपनी नदी से करीब तीन मील दूर ला चुकी थी।

आपस में खूब बातचीत का मौका है यहाँ। खूब चर्चा का विषय है कि पात्रों का लिंग बदलने पर वाक्य के कौन-कौन से शब्द किस-किस तरह से बदल जाते हैं।

वाक्य और संवाद के स्तर पर इस तरह अनेक गतिविधियाँ आप स्वयं बना सकते हैं। अनुवाद का प्रयोग कर सकते हैं, कहानी को अलग-अलग तरीकों से लिखवा सकते हैं। ये चिंता मत कीजिए कि बच्चे लंबे-लंबे वाक्यों से घबरा जाएँगे। यदि वाक्य सार्थक और मजेदार है तो नए शब्द या लंबे वाक्य बच्चों को तंग नहीं करते। शब्दकोष से हम बहुत थोड़े शब्द सीखते हैं। 'दयालु गाड़ीवान...' कहानी में एक वाक्य है—तभी एक आदमी बैलगाड़ी लिए वहाँ से गुजरा और मगरमच्छ को वहाँ पड़े रोते देखकर उसने अपनी गाड़ी छोड़ी और ज़मीन पर घुटनों के बल झुककर यह देखने लगा कि क्या वह इस अभागे जानवर की कुछ मदद कर सकता है।

इस वाक्य में 41 शब्द हैं? क्या यह छोटा वाक्य है? इसमें कितने वाक्य होंगे—
एक आदमी था।

आदमी बैलगाड़ी लाया।

आदमी वहाँ से गुजरा।

आदमी ने मगरमच्छ को देखा।

मगरमच्छ सड़क पर पड़ा था।

मगरमच्छ रो रहा था।

आदमी ने गाड़ी छोड़ी।

आदमी जमीन पर घुटनों के बल झुका।

आदमी देखने लगा।

आदमी अभागे जानवर की मदद कर सकता है।

ऐसे कौन से संरचनात्मक शब्द हैं जिनके प्रयोग से ये सारे वाक्य एक वाक्य बन जाते हैं— से, और, को, ने, कर, कि आदि। ‘कर’ का प्रयोग करते हुए कई वाक्यों को मिला सकते हैं—

राम घर आया।

राम ने खाना खाया।

राम ने घर आकर खाना खाया।

यदि बच्चों को ‘घुटनों के बल’ या ‘अभागे’ का अर्थ नहीं मालूम, तो सीखने का इस तरह के संदर्भों में प्रयोग से बेहतर तरीका और कोई नहीं।

सार्थक संदर्भों में भाषा के प्रयोग से ही भाषा आती है। भाषा के प्रति संवेदनशीलता के लिए, भाषा की प्रकृति एवं संरचना समझने के लिए, अवलोकन तथा विश्लेषण की वैज्ञानिक प्रक्रिया से गुजरने के लिए भाषा को लेकर नई-नई गतिविधियाँ सोचिए। बिना संदर्भ के नए-नए शब्द सीखने, उनके अर्थ रटवाने और व्याकरण के अर्थहीन नीरस नियम बताने से कोई लाभ नहीं। व्याकरण के नियम और भाषा लिखने के तौर-तरीके बच्चे स्वयं खोज लेते हैं। मज़ा खोजने में है।

कहानी सुनाना न केवल शाला-पूर्व शिक्षा के लिए आवश्यक है, बल्कि वह बाद में भी महत्वपूर्ण बना रहता है। कथात्मक विमर्श होने के कारण, मौखिक रूप से कही गई कहानियाँ तार्किक समझ का आधार तैयार करती हैं, साथ ही, ये हमारी कल्पनाशीलता को समृद्ध बनाती हैं और अपने जीवन से अलग परिस्थितियों में भागीदारी की क्षमता का विकास भी करती हैं। कल्पनाशीलता और रहस्यात्मकता का बच्चे के विकास में बड़ा योगदान होता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 (पृ.सं.-47)

हर बच्चे को मिली किताब

लता पाण्डे*

मेले का जिक्र आते ही आँखों के सामने उभर आती है तरह-तरह के झूलों, रंग-बिरंगे गुब्बारों, खिलौनों, चूड़ी, बिंदी आदि शृंगार प्रसाधनों, तरह-तरह की मिठाइयों की दुकानों, चाट-पकौड़ों के ठेलों के पास रंग-बिरंगे कपड़ों में सजे चटखारे लेते लोगों की भीड़, गुब्बारे और बाजे हाथ में लिए खिलखिलाते बच्चों की तसवीर। पर यह एक अनूठा ही मेला था जो रीडिंग डेवलपमेंट सैल, एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा लगाया गया था।

मेला ही क्यों

रीडिंग सैल ने परियोजना की शुरुआत मथुरा ज़िले से की है। प्रकोष्ठ द्वारा विकसित शिक्षक-प्रशिक्षण सामग्री, शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम, क्रमिक पुस्तक माला का प्रथम प्रयोग मथुरा में ही किया जा रहा है। परियोजना मथुरा ज़िले के पाँच खंडों (राया, चौमुँहा, नवझील, फरहा, गोवर्धन) के चयनित लगभग पाँच सौ स्कूलों में चलाई जा रही है। रीडिंग डेवलपमेंट सैल की गतिविधियों में से एक है पठन संस्कृति के विकास के लिए जनचेतना जाग्रत करना। इसी के अंतर्गत मथुरा में जनजागृति अभियान चलाना था। इस संबंध में जब परिषद् में बैठक हुई तो विचार आया कि जागरूकता अभियान के लिए क्यों न बाल पुस्तक मेला लगाया जाए।

मेला यानी अलग-अलग स्थानों से आए लोगों का जमावड़ा, मेला यानी लोगों को एक साथ बहुत-सी चीज़ें एक ही जगह पर देखने का मौका। मेला यानी भरपूर आनंद।

अब सवाल उठा कि मथुरा के चयनित पाँच ब्लॉक में से मेला कहाँ लगाया जाए?

मेले की योजना बैठक

दिनांक 7 फरवरी 2008 को मथुरा जिले के शिक्षकों, शिक्षा अधिकारियों, समाज के लोगों के साथ बैठक की गई। मेले के उद्देश्यों से उन्हें अवगत कराया गया।

*रीडर, प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली 110016

बैठक में तय किया गया कि गोवर्धन ब्लॉक में 8, 9 और 10 मार्च को मेला आयोजित किया जाएगा। अब बारी थी मेले के लिए जगह चुनने की। बैठक समाप्त होते ही हम चल दिए मेले के लिए जगह देखने। सूर कुटि आदि कई स्थानों को देखते-देखते जैसे ही हम पूर्व माध्यमिक विद्यालय, पैंठा पहुँचे तो विद्यालय के गेट के अंदर घुसते ही हम सब एक साथ बोल उठे—हाँ, यह जगह मेले के लिए बहुत अच्छी है। एक तो परिसर काफ़ी बड़ा था दूसरे परिसर में कई पेड़ थे जिनके नीचे गोल चबूतरे बने थे। इन पर बैठकर बच्चों के साथ कई गतिविधियाँ की जा सकती थीं। विद्यालय के हेडमास्टर यह सुनकर खुशी से फूले नहीं समाए कि उनके विद्यालय में मेला आयोजित होगा। दोनों एक साथ बोले, 'हमारे लिए इससे बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है। हम पूरा सहयोग देंगे।' विद्यालय की सफ़ाई-पुताई, गेट के आगे की नाली को पाटने संबंधी आवश्यक बातें की गईं।

क्या-क्या होगा मेले में

मेला आयोजन का एक महत्वपूर्ण मसला यानी कि स्थान का चुनाव हल हो गया था। मेले से जुड़ी दूसरी उतनी ही महत्वपूर्ण बात थी कि मेले में क्या-क्या हो? मेले का मुख्य उद्देश्य किताबों को बच्चों तक तथा बच्चों को किताबों तक पहुँचाना था। लेकिन लगा कि मेले को केवल पुस्तकों तक ही सीमित रखा जाए तो हो सकता है मेला बच्चों को उतना आकर्षित न कर पाए। इसलिए तय हुआ कि पढ़ने से संबंधित गतिविधियों के साथ मेले में कुछ ऐसी गतिविधियाँ भी हों जो बच्चों को सहज ही अपनी ओर खींच लेती हैं; जैसे—कहानी सुनना-सुनाना, रंगीन कागज़ों से तरह-तरह की चीज़ें बनाना, चित्रकारी करना, फिल्म देखना आदि। तकनीक के क्षेत्र में भले ही हम कितना ही आगे क्यों न बढ़ गए हों पर बाइस्कोप अभी भी हमें लुभाता है। सोचा गया बच्चों को बाइस्कोप भी दिखाया जाए? मेले में बच्चों को विषय से संबंधित भी कुछ सीखने को मिले, तो मेला बच्चों को और भी अपनी ओर खींचेगा। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए भी कुछ गतिविधियों का आयोजन मेले में किया गया।

मेले का न्यौता

अब बारी आई यह तय करने की कि मेले में लोगों को कैसे न्यौता जाए। पैंठा ही नहीं गोवर्धन ब्लॉक के जन-जन तक मेले का समाचार अखबारों के माध्यम से आसानी से पहुँचाया जा सकता था। विद्यालयों में भी ब्लॉक संसाधन केंद्र द्वारा

निर्देश दिए जा सकते थे पर हम लोगों को इस प्रकार न्यौता देना चाहते थे कि बच्चे ही नहीं बड़ों के कदम भी स्वयं मेले की ओर बढ़ते चले आएँ। कोई सरकारी आदेश या बाध्यता उन्हें मेले में न लाए बल्कि स्वयं उनका मन मेले की ओर खिंचा चला आए।

कैसे देंगे न्यौता

लोगों तक अपनी बात पहुँचाने का एक बहुत अच्छा माध्यम हैं—नुक्कड़ नाटक, गीत और पोस्टर। इनके माध्यम से मेले का प्रचार-प्रसार तो होगा ही, जन-जन तक अपनी बात भी पहुँचाई जा सकती है। तुरंत निर्णय लिया गया कि गोवर्धन ब्लॉक में मेले से पूर्व जगह-जगह नुक्कड़ नाटक और गीतों द्वारा लोगों को मेले के बारे में बताया भी जाएगा और साथ ही उन्हें आमंत्रित भी किया जाएगा।

कैसे की तैयारी

नुक्कड़ नाटक, गीत और पोस्टर के लेखन और विकास के लिए 20 से 22 फरवरी 2008 को पूर्व माध्यमिक विद्यालय, पैठा में ही कार्यशाला का आयोजन किया गया। तीन समूहों में कार्य किया गया। एक समूह नुक्कड़ नाटक लिखने में व्यस्त था तो दूसरा समूह लोकगीतों के आधार पर गीत लिखने में जुटा था। तीसरे कमरे में चित्रकार पोस्टर बनाने में मग्न थे। पहले दिन तो लगा कि शायद कुछ सार्थक निकलकर नहीं आ पाएगा क्योंकि जब भी कोई नुक्कड़ नाटक या गीत पढ़कर सुनाता तो थीम साक्षरता के इर्द-गिर्द ही घूमती मिलती। फिर बैठकर चर्चा की गई। श्री रमेश थानवी जी ने सुझाव दिया नुक्कड़ नाटक के माध्यम से ही क्यों न गाँव के लोगों को मेले में आने का न्यौता दिया जाए और नुक्कड़ नाटक लिखा गया - **पढ़िबे को न्यौतो है।**

चर्चा के दौरान ही बात उठी कि अक्सर बच्चों की बातों को बड़े ध्यान से नहीं सुनते तो क्यों न एक नुक्कड़ नाटक इसी विषय पर आधारित हो और दूसरे नाटक का विषय निर्धारित हुआ—**अब तो मेरी बात सुनो।**

पहली शाम कुछ दुविधा और थोड़ी-सी आशंका से हम गेस्ट हाउस लौटे थे कि पता नहीं अच्छे नाटक और गीत इन दो दिनों में लिख पाएँगे वहीं दूसरे दिन चार बजते-बजते हमारे पास दो नुक्कड़ नाटक और आठ गीतों का खजाना था। श्री मुद्गल जी ने तो उत्साह से स्वरचित गीत **पोथी रंग बिरंगी आई** स्कूल के बच्चों को सिखा भी दिया। मेले से पहले जगह-जगह नाटक और गीतों के प्रदर्शन के समय बाजे-गाजे की भी व्यवस्था करनी थी। शाम तक कुछ संगतकार

भी साज़ो-सामान के साथ विद्यालय में मौजूद थे। उनसे लोकगीत सुने। विद्यालय में छुट्टी हो चुकी थी। ढोलक और हारमोनियम की आवाज़ सुनकर आस-पास के घरों से बच्चे-बड़े निकलकर विद्यालय में आ जुटे थे। उम्मीद की नन्ही किरण यहीं दिख गई थी कि जब यहाँ इतनी भीड़ जमा हो गई है तो मेले में तो खूब भीड़ जुटेगी।

दूसरे दिन ही विद्यालय के एक कमरे की सूनी दीवारों पर सुंदर चित्र बनाए गए जिसमें वह सब कुछ था जो बच्चों को भाता है—तितली, पतंग, रंगीन किताब, मछली और हाँ, एक दीवार कोरी छोड़ दी गई ताकि बच्चे उसमें अपना मनचाहा चित्र बना सकें, कुछ लिख सकें।

नुक्कड़ नाटक और गीत तैयार हो गए थे। अब बारी थी इन्हें सिखाने की। दिनांक 29 फरवरी और 1 मार्च 2008 को बच्चों को नुक्कड़ नाटक की रिहर्सल कराने के लिए राजस्थान से श्री विजय कौशिक, विलास जाह्नवे विशेष रूप से आमंत्रित किए गए। दोनों नाटकों के लिए 15-15 बच्चों को लिया गया। इनमें से किसी ने भी नुक्कड़ नाटक कभी नहीं खेला था। सबसे पहले तो इनकी झिझक दूर करने के लिए इनसे बातें कीं, गीत सुने, खेल करवाए। ‘खड़क सिंह के खड़कने से खड़कती हैं खड़कियाँ’ पंक्ति को बच्चों से अलग-अलग भावों से बोलने को कहा गया। ‘अच्छा ज़रा रौबदार ढंग से इस वाक्य को कोई बोलकर तो दिखाए’ कहते ही एक लड़के ने रौबीले अंदाज में इस वाक्य को दोहराया। दूसरे बच्चे से कहा गया ‘डरते हुए इस वाक्य को कहोगे तो कैसे कहोगे?’ उसने डरते-डरते जब यह पंक्ति दोहराई तो बच्चों को बड़ा आनंद आया। फिर एक लड़की से पूछा, ‘अब क्या इसे आरती की तर्ज पर गाकर सुना सकती हो?’ उस लड़की ने आरती की धुन पर जैसे ही यह पंक्ति गानी शुरू की, सब हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए। हास्य, व्यंग्य, आश्चर्य, क्रोध सभी प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति इस टंगट्विस्टर पंक्ति के माध्यम से बच्चों ने की। बच्चों को शाबाशी देते हुए उन्हें समझाया गया कि देखो तुम सभी ने कोई-न-कोई भाव व्यक्त किया है यानी कि एक्टिंग तुमको आती है। ऐसे ही नाटक की रिहर्सल करनी है। नाटक की स्क्रिप्ट की फोटोकॉपी बच्चों को पढ़ने को दे दी गई। उसके बाद बच्चों से कहा गया कि स्क्रिप्ट एक ओर रख दो। बच्चों को उनका रोल बताते हुए कहा गया, ‘अब अपनी बोली में जैसे बोलते हो वैसे ही संवाद बोलो।’ बच्चों को जब अभिव्यक्ति की आज़ादी मिली तो वे खुलकर सामने

आए। फिर न कहीं झिझक थी न ही था संकोच। खुली-सधी आवाज़ में नाटक का अभ्यास करते इन नन्हे कलाकारों को देखकर ही विश्वास हो गया था कि इनके द्वारा नुक्कड़ नाटक के माध्यम से दिया गया न्यौता जरूर स्वीकारा जाएगा। 4 और 5 मार्च 2008 की तिथियाँ नुक्कड़ नाटक करने के लिए तय की गईं।

अब न्यौते की बारी

4 और 5 मार्च 2008 को पैठा तथा गोवर्धन में कई स्थानों पर गाँव में नुक्कड़ नाटक किया जाना था। हम दस बजे बी.आर.सी., गोवर्धन पहुँच गए। तय किया गया था कि वहाँ से सब मिलकर पैठा जाएँगे। सब हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। अंदर कमरे में दो शिक्षिकाएँ बच्चों को नाटक की रिहर्सल करा रही थीं। बच्चों ने **मैं भी** और **रूपा हाथी** इन दो कहानियों को अभिनीत कर दिखाया। चाय पीकर हम सब पैठा की ओर रवाना हुए। विद्यालय के गेट के पास हमारी गाड़ी पहुँची तो ढोलक, हारमोनियम और बच्चों के समवेत स्वर में गाए जा रहे गीतों ने हमारा स्वागत किया। नन्ही नाटक मंडली पूरे जोश और उमंग के साथ तैयार थी। मिड डे मील का अक्षय पात्र आ चुका था। हमने बच्चों से कहा कि खाना खा लो, फिर चलेंगे। नाटक के उत्साह ने उनकी भूख ही गायब कर दी थी। हमारे मनुहार करने पर वे गाड़ी से उतरे और जल्दी-जल्दी खाना खाया। गाड़ियों में सवार हमारे काफ़िले का पहला पड़ाव था गाँव सकरवा। हम सब चल दिए गाँव की चौपाल की ओर। ढोलक और हारमोनियम वादक ने अपना आसन जमाया और ढोलकिया ने थाप देनी शुरू की। ढोलक की आवाज़ सुनते ही लोग आने शुरू हो गए। पहले तो पुरुष वर्ग ही आया। नन्हे बच्चे, किशोर, युवा, वृद्ध चौपाल के आस-पास जुटने लगे। पास के घरों की कुछ औरतों ने खिड़कियों से झाँका। हम में कोई बैठ गया तो कोई खड़ा रहा। बच्चों ने नाटक शुरू किया। जैसे-जैसे नाटक आगे बढ़ा, लोगों की भीड़ जुटनी शुरू हो गई। खिड़कियों से झाँकती औरतें बाहर बरामदे में आ गईं फिर बरामदे से निकलकर गली में आ गईं। गोद के नौनिहाल भी रोना-धोना भूलकर टुकर-टुकर इस नाटक के गीत-संगीत में रम से गए थे। नाटक के दौरान जैसे ही गीत शुरू होता और ढोलक, हारमोनियम बजता, कई नन्हे बच्चे भी गोदी में ही ठुमकने लगते मानो कह रहे हों—हम न्यौते पर अम्मा के साथ जरूर आएँगे। नाटक के बाद गोवर्धन

ब्लॉक के सहायक ब्लॉक संसाधन समन्वयक श्री राजीव तेहरिया गाँवासियों को कुछ तरह से न्यौतते—जे न्यौतो हम बड़े लोगन की ओर से नाय है। इन बालकन की ओर से है। आप सब जरूर अइयो। जा मेला में सिनेमा दिखायो जायगो। हर बच्चा के एक-एक किताब दई जाएगी बोउ बिना पइसन के।

अब भला ऐसा कभी हो सकता है कि नन्हे-बच्चे बुलाएँ और बड़े न आएँ। इसके बाद डोमपुरा, माढ़ा, चौथइया एक गाँव से दूसरे गाँव में होते हुए कहीं बरामदे, कहीं चौपाल में नाटक कर जन-जन तक न्यौता पहुँचाया। दोपहर में धूप तेज हुई, पर उत्साह में कमी नहीं आई। पाँच जगह नाटक करने के बाद किसी ने कहा, ‘बच्चे भी अब थक गए होंगे बाकी जगह कल न्यौतेंगे।’ तो कई बच्चे झट बोल उठे, ‘नहीं, अभी नहीं थके हैं।’

दो दिनों में बारह जगहों पर नुक्कड़ नाटक कर बच्चों ने गाँवासियों को मेले में आने का न्यौता दिया।

ऐसे लगा मेला

7 फरवरी 2008 को मथुरा में योजना बैठक के साथ ही परिषद् में रीडिंग डेवलपमेंट सैल के सदस्यों द्वारा भी मेला आयोजन की तैयारियाँ शुरू हो गई थीं। मेले में किताबों के स्टॉल लगाने के लिए विभिन्न प्रकाशकों से संपर्क किया गया तो कुछ ने मार्च माह में होने वाली व्यस्तता के नाते असमर्थता व्यक्त कर दी। कुछ ने पैठा गाँव में मेले की बात सुनते ही प्रतिक्रिया व्यक्त की—गाँव में किताबें कौन खरीदेगा? लेकिन हमने भी जब कदम आगे बढ़ा ही दिया था, तो पीछे हटने का सवाल ही नहीं उठता था। हमारा प्रयास जारी रहा।

मिले हाथ से हाथ

विभिन्न संस्थानों तथा प्रकाशकों से संपर्क साधने का हमारा प्रयास रंग लाया और नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली, रूम टू रीड, नई दिल्ली तथा एकलव्य, भोपाल ने मेले के दौरान अपनी किताबों की प्रदर्शनी की भी सहमति दे दी। विभिन्न गतिविधियों के लिए अंकुर, नई दिल्ली, एकलव्य, भोपाल, राष्ट्रीय बाल भवन, नई दिल्ली, जोड़ो ज्ञान, नई दिल्ली जैसे संस्थानों ने भी मेले में आकर बच्चों के साथ कुछ करने में रुचि दिखाई।

किसी भी नेक काम की शुरुआत की जाती है तो अनेक हाथ स्वयमेव साथ

में आ मिलते हैं। महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, नई दिल्ली से जब पुस्तक मेले के दौरान बच्चों को पुस्तकें देने के लिए सहयोग राशि हेतु संपर्क किया गया तो उन्होंने सहर्ष ही स्वीकृति दे दी।

मेले का दिन आया

वास्तव में बच्चों के ही न्यौते का असर था कि मेले में अपार जन-समूह उमड़ पड़ा। मेले में बच्चों के लिए न ही कहीं झूला था और न ही कोई तमाशा। पर हर बच्चा यहाँ खुश दिखाई दे रहा था। बच्चों के करने के लिए यहाँ बहुत कुछ था।

बाइस्कोप के चारों ओर बच्चों की भीड़ जमा थी। सभी बच्चे बाइस्कोप में आँख लगाकर देखने को आतुर थे। अपनी बारी आने पर बाइस्कोप से आँख सटाकर उसके अंदर के चित्र देखते बच्चों के चेहरे का उल्लास देखते ही बनता था।

एक जगह प्रेम भाई कागज से टोपियाँ बनाना सिखा रहे थे। कागज की टोपियाँ बनाने में बच्चों को बड़ा मजा आया। न ही काटना था और न ही चिपकाना। बस यहाँ-वहाँ से मोड़ा और बन गई टोपी। कागज से ही शर्ट बनाना भी बच्चों को बहुत भाया। बच्चे अपने हाथों से तरह-तरह की टोपियाँ बनाते और तपाक से उसे पहन लेते-देखो मेरी टोपी। तरह-तरह की कागज की टोपियों से सजे बच्चे मेले में चारों ओर घूम रहे थे।

टोपी पहनकर बच्चे चले जाते दूसरी तरफ़ जहाँ कार्तिक जी ने बच्चों को कागज से तरह-तरह के पशु-पक्षी बनाना तो सिखाया ही, यह भी बताया कि इस कला को ऑरिगेमी कहते हैं। बच्चों ने रंग-बिरंगे पतंगी कागज से तरह-तरह के फूल बनाने का भरपूर आनंद उठाया।

एक कोने में कठपुतली का नाच भी था। अंगुलियों में धागा बाँध उन्हें चलाकर कठपुतलियों के करतब तो बच्चों ने देखे ही साथ ही प्रमोद जी से उन्हें यह जानकारी भी मिली कि तरह-तरह की कठपुतलियों को कैसे बनाया जा सकता है।

मेले में बच्चों को नाटक कला से परिचित कराया जा रहा था। संवादों की अदायगी में बच्चों ने भरपूर रुचि ली।

हर बच्चे को मिली किताब

एक कमरे में मधु जी बच्चों को चित्रकारी सिखा रही थीं। रंगों की बूँदें कागज पर टपकाईं, कागज को मोड़ा, खोला तो अद्भुत रंग-बिरंगी आकृति सामने थी। बच्चों ने बहुत से कार्ड बनाए। सुरजीत जी ने भी तरह-तरह के नए चित्र बच्चों को बनाने सिखाए।

जब बच्चों के मनपसंद की सारी चीजें थीं तो कथा-कहानी के जादू से बच्चों को क्यों वर्चित रखा जाता। एक कमरे के सामने बोर्ड लगा था— सुनो कहानी। कहानी सुनना भला किस बच्चे को अच्छा नहीं लगता। बच्चों से खचाखच भरा था यह कमरा। कोने में रस्सी के सहारे किताबें लटकी थीं। मुकेश जी बच्चों से कोई किताब चुनने को कहते। फिर उस किताब के शीर्षक, उसके पात्रों पर चर्चा करते, नाम के आधार पर कहानी के कथानक का अनुमान लगाया जाता और फिर सुनाई जाती कहानी। बच्चों को भी कहानी सुनाने का मौका दिया गया। बच्चों ने गीत, कहानियाँ भी लिखीं। दीवार पर एक कागज चिपकाया गया जिस पर बच्चों से मेले के समाचार तथा मेले के बारे में लिखने के लिए कहा गया। बच्चों ने मेले ही नहीं कहानियों के बारे में अपनी राय भी लिखी।

जोड़ो ज्ञान संस्था से आए दीपांकर और प्रदीप के चारों ओर जमा बच्चों और शिक्षकों की भीड़ गणितीय खेल का आनंद ले रही थी।

मेले में बाइस्कोप था तो साथ में फिल्म भी थी। केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली द्वारा ऑडियो कैसेट, सीडी के स्टॉल लगाए गए थे। इकबाल फिल्म को देखने बच्चों, बड़ों सबकी भीड़ समान रूप से जुटी।

किताबें ही किताबें

मेले में जहाँ बच्चों के करने के लिए तमाम गतिविधियाँ थीं वहीं उनके खरीदने के लिए अनगिनत किताबें थीं। एकलव्य, नेशनल बुक ट्रस्ट, रूम टू रोड के साथ ही एन.सी.ई.आर.टी. की किताबों के स्टॉल लगे थे। हर स्टॉल पर टेबल और बेंचों पर तो किताबें रखी ही थीं, रस्सी बाँधकर उस पर भी किताबें लटका दी गई थीं। चारों ओर रंग-बिरंगी किताबें ही किताबें नज़र आ रही थीं।

आर्थिक दृष्टि से कमज़ोर बच्चों तथा हर बच्चे को एक किताब मिले इस विचार से किताबों के दामों में 20-25 प्रतिशत तक की रियायत दी गई थी। बच्चे किताबों के स्टॉल पर जाते, किताबों को छूते, उठाते, उस पर हाथ फेरते, उलटते-पलटते, कभी वहीं खड़े होकर पढ़ने की कोशिश करते। हर बच्चा

किताब खरीदना चाह रहा था। हाथों में दो, पाँच, दस के नोट लिए नन्हे हाथ किताब खरीदते और फिर उस खरीदी किताब को छाती से लगाकर मेले में घूम रहे अन्य साथियों को दिखाते। विभिन्न स्टॉलों पर शिक्षक भी किताबों को खरीदकर टी.एल.एम. की राशि का सदुपयोग करना चाह रहे थे। शिक्षक और बच्चे अपने-अपने लिए किताबें खरीद रहे थे। किताबों की खरीद को देखकर यह भ्रांति सहज ही दूर हो गई कि गाँवों में किताबों के पाठक नहीं हैं।

रीडिंग डेवलपमेंट सैल द्वारा भी स्टॉल लगाया गया था। इस स्टॉल में एकलव्य, तूलिका, कथा, एन.बी.टी, सी.बी.टी. आदि अनेक प्रकाशकों की चुनिंदा पुस्तकें रखी गईं। मेले के पहले ही दिन शाम को जब मेले के दूसरे दिन की योजना पर चर्चा हुई तो यह जानकर सुखद आश्चर्य हुआ कि सभी प्रकाशकों की हिंदी की पूरी किताबें बिक चुकी हैं। एकलव्य तथा नेशनल बुक ट्रस्ट से आए भाई ने कहा हम सोच भी नहीं सकते थे कि हमारी पूरी किताबें बिक जाएँगी। हिंदी की तो पूरी किताबें बिकी हों, अँग्रेजी की किताबों की भी अच्छी खासी बिक्री हुई।

महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, नई दिल्ली ने मेले के दौरान स्वयं मेले स्थल पर आकर बच्चों को संबोधित किया और बच्चों को उपहारस्वरूप किताबें दीं। किताबें पाकर बच्चे बहुत खुश थे। एक-दूसरे की किताबें देख रहे थे—मुझे तो काली कोयल मिली है, तुझे कौन-सी किताब मिली। बच्चों से कहा गया कि अपने साथियों के साथ अदल-बदल कर किताबें पढ़ेंगे तो हरेक को बहुत-सी किताबें पढ़ने को मिल जाएँगी।

बच्चे जहाँ किताबें खरीदने में रुचि ले रहे थे वहीं उपहारस्वरूप दी जाने वाली किताबों में स्टिकर लगाने के काम में भी बच्चों ने तत्परता से सहयोग दिया। इस मेले में लगभग 4,000 बच्चों ने भाग लिया।

जिस प्रकार ईदगाह के नन्हे हामिद के हाथ में मेले से लौटते वक्त न तो खिलौना था और न ही मिठाई। नन्हा हामिद दादी के लिए चिमटा खरीदकर विश्वविजेता की तरह घर लौटा था। उसी तरह इस अनूठे मेले से भी घर लौटते वक्त न तो किसी बच्चे के हाथ में कोई गुब्बारा था न ही कोई मिठाई, हर बच्चे के हाथ में एक किताब थी और उस किताब को सीने से लगाए नन्हे कदम घर लौट रहे थे।

इन बच्चों को देखकर लगा कि शायद हमसे ही कहीं चूक हो जाती है बच्चों का किताबों से नाता जोड़ने में। पर धीरे-धीरे इस भावना को धूमिल करता एक विश्वास मन में उपजा कि बच्चों का किताबों से और किताबों का बच्चों से नाता जोड़ने की बस देर है, किताबें तो बच्चों को भाती ही हैं।

एक अच्छा आदमी
खिले हुए फूल की तरह
सबको सुख पहुँचाता है।
एक अच्छी किताब
खुशमिजाज आदमी की तरह
लिखने की प्रेरणा देती है।
एक अच्छे आदमी की अच्छी किताब
एक ऐसी इबारत है
जिसे उस तरह जी कर ही
पढ़ा जा सकता है।

– राम नारायण उपाध्याय



पढ़ना है समझना

पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों के लिए स्वयं पढ़ी जाने वाली क्रमिक पुस्तकमाला

बरखा

- बरखा में हैं चालीस कहानियाँ।
- कहानियाँ चार भागों में विस्तारित हैं।
- कहानियाँ बच्चों के रोज़मर्रा के अनुभवों और परिवेश से संबंधित विषयों पर आधारित हैं।
- यह पुस्तकमाला बच्चों को समझ के साथ पढ़ने के अवसर देती है।
- यह पुस्तकमाला बच्चों में आत्मविश्वास जगाती है – हाँ, मैं पढ़ सकती/सकता हूँ।
- बरखा की कहानियों को पढ़ने से बच्चों में अधिक से अधिक पढ़ने की ललक जाग्रत करती है।
- बरखा बच्चों को पढ़ने का आनंद देते हुए स्थायी पाठक बनने की ओर ले जाती है।



क्रमिक पुस्तकमाला—बरखा एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली से प्रकाशित है।



2100

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-81-7450-911-6